मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :	सम्पादक :
परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज	सेठ दुर्गादासजी

२	जनवरी १९७६	संख्या ९

परमार्थी का जीवन

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

इस जगत में सुख और दुख दोनों ही हैं। कोई संसार में दुखी है, कोई सुखी है। लेकिन दुख के बाद सुख और सुख के बाद दुख अनिवार्य है। जीव अनुभव के बाद यह चाहता है कि मैं इस द्वन्द के जगत से निकल जाऊं। मुझे न दुख प्रतीत हो न सुख प्रतीत हो। इसलिए वह सन्तों के सत्संग में जाता है। वहां से उपदेश मिलता है कि इस जगत में किस प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिए। इस उपाय के बारे में गुरु नानक साहब फरमाते हैं।

जल में कंवल निरालम, मुरगानी निशानिए।
सुरत शब्द भव सागर तरिए, नानक नाम वरवानिए।

इन का यह वाक्य यथार्थ है। कितना सुन्दर है। एक वाक में ग्रन्थ भर दिया। सारे जीवन का नचोड़ इसी में भर दिया कि मानव को किस विधि से अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए। यह उपदेश एक स्वार्थी

संसारी के लिए नहीं है। वह इस बात को समझ नहीं सकता है। आप परमार्थी को संकेत करके फरमाते हैं कि तू इस संसार के दुखों सुखों से घवराया हुआ है।

फरमाते हैं, तू सुरत शब्द का अभ्यास किया कर नाम की कमाई कियाकर। अपने अन्तर गुरुके दर्शन कियाकर। लेकिन संसार में यूं रहना जैसे जल में कंवल रहता है। तालाव में पानी कितना ही आजाये कितना ही चढ़ जाये कंवल सदा पानी के ऊपर रहेगा। डूबेगा नहीं। पानी का ंवल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। न ही कंवल के नीचे और न ही ऊपर पानी ठहर सकता है। इसलिए गुरु नानक साहिब कंवल का उदाहरण देते हैं कि ऐ परमार्थी! यों कंवल की तरह इस संसार में रहना। संसार का कोई प्रभाव तुम ग्रहण न करो। कोई प्रभाव तुम पर न हो। इस जगत से ऐसा सम्बन्ध रखो कि इस सम्बन्ध में कोई दुख सुख प्रतीत न हो। सम्बन्ध में बेसम्वन्धी हो। सन्बन्ध में बन्धन है। सम्वन्ध में दुख है। निर्बन्ध में शान्ति मिलेगी।

दूसरा उदाहरण मुरगावी का फरमाते हैं। मुर-गावो जल में रहती है लेकिन इसके शरीर के किसी

अंग पर पानी प्रभाव नहीं डालता। वह सदा सूखी रहती है। जंगत में रहो, जगत के सब काम करो। लेकिन जगत को मन मत दो। जगत आप पर सवार न हो। आप जगत के सव बन्धनों पर सवार रहें। यह आपकी शान होगी। पूछा जाता है, यह कैसे सम्भव है। कैसे हो सकता है। यह अभ्यास की बात है। यह तो करके देखने वाली बात है। गुरु नानक साहिब इसके लिए एक रास्ता दिखाते हैं। क्या फरमाते हैं।

नानक नन्हा हो रहे, जैसे नन्हीं दुब।

सदा छोटे बने रहो। नन्हा बनने का यत्न करो पेड़ को जब फल लगता है पेड़ झुक जाता है। पानी सदा नीची जगह पर ठहरता है। ऊंचा स्थान सदा खुशक रहता है। ब्यक्ति की बुढ़ापे में कमर झुक जाती है सबके आगे यह गुण छोटा बननें में हैं। झुकना अच्छा है।

हार चले सो सन्त है जीत चले सो नीच।

हार जाना अच्छा है इसमें बचाओ है। यह नीति सब जगह पर सफल होती देखी गई है। जो संसार में छोटा बना रहता है वहीं लगाव में वे लगाव हो

सकता है और संसार में परमार्थी जीवन व्यतीत कर सकता है।

दानी पुरुष भी बन्धन में नहीं आते। दान परमार्थी जीवन का एक अंग है जो इसको आकाश तक पहुंचा देता है। दान के बिना परमार्थ क्या। एक मसकीन नाम का पहलवान लाहौर (पाकिस्तान) में रहता था। बड़ा प्रसिद्ध पहलवान था। इसके सामने इसके साथ दंगल के लिए कोई नहीं आता था। एक दिन लाहौर में दंगल होना था जिसमें पहलवान मसकीन ने भी भाग लिया था। एक गरीब को पता लगा कि लाहौर में दंगल होने वाला है। वह बेचारा गरीब था। इसकी नौजवान लड़की थी। जिसके विवाह की इसको बहुत चिन्ता थी। पास धन नहीं था। क्या करता इस सोच में था कि विचार आया क्यों न मसकीन पहलवान से कुश्ती करूं! जीतने वाले का पांच सौ इनाम था। जो हार जायेगा उसको आधा इनाम मिलेगा, यही सही, लड़की का विवाह तो करूंगा इस नीयत से दंगल में भाग लेने के विचार से वहां पहुंच गया।

दंगल आरम्भ था। हज़ारों आदमी दंगल देख

रहे थे। जब मसकीना कुशती के लिए निकला तो सन्नाटा छा गया। इसके मुकाबले में कोई पहलवान मैदान में न निकला। इसने दंगल का एक चक्कर लगाया लेकिन इस व्यक्ति ने वड़ा उत्साह किया। लंगोटा बांधा और मैदान में आ निकला। चारों ओर हा-हा कार मच गई। यह कौन है जो मुकाबले पर आ गया ? सब चकित थे या संसार चकित था। लेकिन मसकीने को आगे बढ़ना पड़ा। दो चार हाथ मिलाये। एकदम नीचे गिरा लिया। इसके ऊपर बैठकर मसकीना इस आदमी से पूछने लगा। सच सच बता तू मेरे मुकाबले पर कैसे आया। इस व्यक्ति ने कहा कि मैं गरीव हूं। धन पास नहीं है। लड़की युवा है। इसका विवाह करना है। सुना है जो आपसे हार जायेगा इसको भी इनाम मिलेगा। इसलिए आ गया हूं। तो मसकीन ने इसको कहा कि अच्छा तुम मेरे ऊपर आ जाओ और मुझे चित कर दो। इस व्यक्ति ने बल से काम लिया। मसकीन को चित कर दिया

वाह रे मसकीना। मसकीन कितना प्रसन्न हुआ होगा लेकिन संसार वाले चकित थे यह क्या हो गया ? मसकीना कैसे हार गया ? मसकीन को दया आई।

दिल में दया उमडी । इसने अपनी मान प्रतिष्ठा की परवाह न की । बड़ी भारी कुरवानी दे दी । इसकी कुरबानी का अनुमान लगाना असम्भव है । वर्णन से बाहर है ।

दया धार धर्म को पाले, ताहि मिले अविनाशी ।

इसने अपने धर्म का पालन किया । एक गरीब की सहायता की । संसार ने वाह वाह की । बाद में वैकुण्ठ को गया । इसके लिए स्वर्ग लोक में स्थान रिज़रव रख दिया गया । यह है फल दया का । क्या आप भी स्वर्ग लोक में जगह रिज़रव करवाना चाहते हैं । समय का लाभ उठाओ । किसी पर दया करो । यदि आपकी इच्छा है तो जगह स्वर्ग लोक में आपके लिए भी रिज़रव हो सकती है ।

स्वामी रामतीर्थ फरमाते है ।

बहुत मजबूत घर है आकबत का दौरे दुनिया से ।
उठा लेनी यहां से अपनी दौलत और वहां रखना ।

स्वामी जी फरमाते है कि आकबत का मकान आपका बहुत शक्तिशाली है । वहां अपना धन रखो सुरक्षित ठीक रहेगा । चोर का डर नहीं। आग का डर नहीं सवाया होकर मिलेगा और आपके काम आवेगा ।

गुरु महाराज जी को अमृतसर में इस घटना का पता लगा। वह बहुत प्रसन्न हुये और मसकीने को अशीर्वाद दिया और यूं फरमाने लगे।

सुखी बसे मसाकीनिया आपन मार तले।
वड़े-बड़े अहंकारिया नानक गरभ गले।

मसकीनिए की याद सत्गुरु महाराज जो ने सदा के लिए जीवित कर दी। जो ग्रन्थ साहिब का अध्ययन करेगा मैसकिने की इस वीरता, उत्साह, दलेरी और दया भाव की प्रशंसा करेगा। वाह रे मसकीनिया।

लेकिन शोक है आजकल क्या हो रहा है। ५/- रु० दान दिया जाता है तो इच्छा रहती है कि इसका नाम समाचार पत्र में छप जाये। धर्म शाला बनवाई तो अपनी फोटो और अपने नाम का पत्थर वहाँ लगाया जाता है यादगारो के लिए। एक ढंग से यह भी अच्छा है दूसरों के दया भाव को गति मिलती है। एक और सच्ची घटना सुनिए।

सत्पुरुष किसतरह कुरवानी करते हैं। दूसरों की सहायता करते हैं। अपने निजी स्वार्थ की ओर कभी ध्यान नहीं देते मिस्टर मासकल एक अंगरेज़ रेलवे

विभाग में टैलीग्राफ सुप्रइनटेन्डैन्ट बगदाद में थे। मिस्टर वारेन ट्रैफिक मैनेजर था। दोनों की आपस में अनबन थी। मिस्टर मासकल विवाह के लिए इंगलैंड जा रहे थे। यह 1922 की बात है। जब इराक में नौकरियां पक्की न थी। इसलिए मिस्टर मासकल को डर था कि मिस्टर वारेन इनको नौकरी से हटवा देंगे। इसलिए मिस्टर मासकल ने महाराज जी से बात चीत की। उस समय महाराज जी उनके अधीन-टैलीग्राफ इन्सपैक्टर लगे हुये थे। मिस्टर मासकल ने अपनी कठिनाइयां महाराज जी को बताई। क्योंकि महाराज जी भी जानते थे। मासकल के बाद इनको चार्ज लेना था,

महाराज जी ने मिस्टर मासकल को हर प्रकार से तसल्ली दी और कहा कि आप इंगलैंड जावें। आप अवश्य ही इसी नौकरी पर वापिस बगदाद आयेंगे। मैं आपका स्थान लेना स्वीकार नहीं करूगा। मिस्टर मासकल इंगलैंड छुट्टी पर चले गये। इनके चले जाने के बाद एक सप्ताह बाद ही होने वाली बात हो गई और महाराज जी को मिस्टर बारेन ने बुलाया और कहा कि हम अपने कर्मचारियों की

छोटी कर रहे हैं। और आपको Telegraph Superintendent के पद पर लगाया जा रहा है। उस समय महाराज जी का वेतन 250/- रुपये था और मिस्टर मासकल के पद का वेतन एक हज़ार रुपया था। लेकिन महाराज जी ने यह पद लेने से बिल्कुल इनकार किया, यह कहकर कि मैंने मिस्टर मासकल से वायदा किया हुआ है कि मैं इसका स्थान ग्रहण नहीं करूंगा। इसलिए मैं विवश हूं। मुझे क्षमा कीजिए। मैं स्वयं उस समय बगदाद में था। इनकी यह कुरबानी देख कर सब चकित थे। तबसे सब अंगरेज़ अफसर आपको बड़े मान की दृष्टि से देखते थे और टोपी उतारकर सलाम किया करते थे। यह है दया भाव, दया की दृष्टि। लगी को निभाना। मित्रता का कर्तव्य पूरा करना। किसी की कठिनाईयों में अपना बलिदान देकर सहायता करना। इस लिये कबीर साहिब फरमाते है।

लेने को सतनाम है, देने को अन्न दान।
तरने को है दुनियां, डूबने को अभिमान।

यदि भवसागर से पार होना चाहते हो तो दीन बनते रहो। जिसको किसी प्रकार का अहंकार नहीं है

वही दीन हो सकता है और जो दीन है वही इस जगत में वन्धन रखता हुआ निर्बन्ध हो सकता है। इस बात का सम्वन्ध अपने दिल से है। दिल को समझाना है। और बस। लेकिन यह जीते जी मरना है जोकि हर व्यक्ति के लिए कठिन है। किसी महापुरुष के काफी सत्संग के बाद यह दशा आ सकती है। यह रहनी का सवाल है।

कथनी कथे सो मित्र हमारा, करनी करे सो नाती।
रहनी रहे सो गुरु हमारा, हम रहनी के साथी।

अजर-अमर नाम

सत्संग हज़ूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक 21 अकतूबर 1975

अजर अमर इक नाम है सुमिरन जो आवे ।
बिन मुखड़ा से जप करो, नाहिं जीम डुलावो ।
उलटि सुरति ऊपर करो, नैनन दरसावो ।
जाहु हंस पच्छिम दिसा, खिरकी खुलवावो ।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ।
पानी पवन के गम नहीं, वोहि लोक मंझारा ।
ताही बिच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो ।
जिमी असमान उहां नहीं, वोह अजर कहावै ।
कहै कबीर सोइ साधु जन, वा लोक मंझावै ।

राधास्वामी ! हजूर दाता दयाल महर्षि श्री शिवबृतलाल जी महाराज ने जब मुझे यह काम

दिया था तो कहा था कि यह काम करते रहना। सत्संग कराते रहना। इस काम से तेरा अपना ही कल्याण होगा। मैंने यह शब्द सुना। अपने आपसे पूछता हूं कि क्यों फकीर! तुमको उस अजर अमर का पता लग गया? पता नहीं कि कबीर साहिब या राधास्वामी दयाल का अजर अमर नाम क्या है। सचाई की तलाश में नाम को जपते २ मेरी आयु बीत गई। मुंह से बहुत राम २ जपा और बहुत राधास्वामी २ जपा मगर मुझे वह अजर अमरपना नहीं मिला।

ऐ मेरे मालिक! मेरे आधार!! मेरे बनाने वाले!!! मुझे तेरी तलाश थी। इस सिलसिले में मौज हजूर दाता दयाल जी महाराज के चरणों में ले गई। उन्होंने सन्तमत की शिक्षा दी। मेरे लिए यह एक नई वस्तु थी। मैं सच्चा बनकर इस मार्ग पर चला। कहां पहुंचा? कुछ पता नहीं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि फकीर चोला छोड़ने से पहले शिक्षा बदल जाना। मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। ये लोग मेरे पास आ जाते हैं। मैं सोचता हूं कि इनको क्या

दूं। जो मुझे मिला वही बता सकता हूं। अजर अमरपना क्या हैं ?

अजर अमर इक नाम है सुमिरन जो आवै।

वह कहते हैं। कि अजर अमर वह नाम है जो सुमिरन में आये। तो फिर सुमिरन क्या हैं ? मुंह से कोई राम राम जपता है, कोई राधास्वामी २ जपता है। मैंने भी बहुत जपा। मगर अजर अमर का पता नहीं लगा। तो फिर इससे यह सिद्ध हुआ कि यह असली सुमिरन नहीं है। फिर सुमिरन क्या है ? जैसे तुम यहाँ बैठे हो तुमकों पत्नि की याद आ जाती है। दुकान या कारोबार याद आ जाता है। वह जो तुमको इनका विचार आता है या याद आती है वह है सुमिरन। मैं क्यों ऐसा कहता हूं ? मैंने मुंह से बहुत राम राम जपा, राधास्वामी २ जपा। मगर उस अजर अमर का पता नहीं लगा। तो फिर वह कौन सा नाम है जो मैं सुमिरन करता हूं ? निचले नाम बहुत सुमिरन किये। यदि शब्द को नाम कह दूं तो शब्द तो घन्टा शंख बंसरी और बीन भी है। क्या घण्टा शंख बीन और वंसरी सुनने से मुझे अजर अमर का पता लग गया ? नहीं। इनके सुनने से मैंने

आनन्द लिया, खुशी ली, मगर वह अजर अमर नहीं मिला। कैसे मिला ? पहले तो मैं घण्टा शंख ओं, मृदंग, बीन और मुरली को नाम ही समझता था। जबसे मुझे यह समझ आई कि यह घण्टा शंख ओं, आदि शब्द क्यों बजते हैं तो मुझे असली नाम को ढून्ढने की विवशता हुई। मैंने पांच नाम की व्याख्या नामो एक पुस्तक लिखी है। जिसमें इन शब्दो के बजने का कारण बर्णन किया है आज तक किसी सन्त ने यह नहीं बताया कि ये शब्द अन्तर में क्यों होते हैं। मैं पहला आदमी हूं जिसने इनका कारण वर्णन किया है। आदमो के अन्तर में जिस प्रकार के विचार भाव संकल्प और आशायें होती हैं और जिस प्रकार की उसकी प्रकृित होतो है उसके अनुसार आदमी के अन्तर में ये धुनें होती हैं। जिस प्रकार बाहर में स्थूल पदार्थ की धातुओं के इकटठा होने से घन्टा और शंख बजता है और सूक्षंम प्रकृति की वासनाओं के इकटठा होने से मुरली और बीन की ध्वनी पैदा होती है। तो फिर इससे यह सिद्ध हुआ कि ये तो प्रकृति के शब्द हैं। प्रकृति के और वासनाओं के अनुसार होते हैं। तो फिर ये शब्द

अजर अमर न हुये। मैं अब यत्न करने पर यह घण्टा, शंख, मृदंग या ओं आदि के शब्द नहीं सुन सकता। क्यों ? क्योंकि मेरे अन्तर अब वे वासनायें नहीं हैं।

तुम लोग मुझे गुरु मानते हो। हो सकता है, मैंने जो समझा है वह ग़लत हो। मगर मेरी तलाश ने यह सिद्ध कर दिया है कि सहस दल कंवल, त्रिकुटि, सुन, महासुन्न आदि में आशाओं के अनुसार और प्रकृति के अनुसार जो शब्द होगा वह अजर अमर कैसे हुआ ? सोचने वालो! सोचो मैंने क्या कहा तुम सत्संगियों की दया से जब से मुझे यह पता लगा कि मेरा रूप तुम्हारे अन्तर प्रकट होकर तुम्हारी सहायता कर जाता है और तुम्हारे काम कर जाता है। क्योंकि मैं नहीं होता और जब से यह अनुभव हुआ कि मन के अन्तर शंख घण्टा मृदंग मुरली आदि जो शब्द हैं, ये सब प्राकृतिक हैं। तबसे मैं उस अजर अमर नाम को तलाश करने के लिए विवश हो गया। तुम देखो तुम्हारे अभ्यास की दशा सदा एक जैसी नहीं रहती। बदलती रहती है। क्योंकि हमारी प्रकृति में परिवर्तन आता रहता और प्रकृति का सम्बन्ध बाहरी प्रभाव और भोजन

से है तो फिर अजर अमर नाम क्या है ? मैं जब कभी विचारों भावों संकल्पों को छोड़ जाता हूं, मन से ऊपर चला जाता हूं, प्रकाश और शब्द को भी छोड़ जाता हूं तो फिर उस वस्तु की तलाश करता हूं जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। उस वस्तु के होने का पूरा विश्वास हो जाना ही अजर अमर नाम है। मैं अभी समाधी में था। न शरीर का अनुभव था न खारश थी। क्यों ? क्योंकि मेरा जो अपना आप है वह अपने आप में था। सुमिरन में था। याद में था। वहाँ मन की माला, विचार की माला या नाम की माला नहीं फैरी जाती। वह जो हमारे अन्तर में असली वस्तु (सुरत) है। उसका शरीर मन प्रकाश और शब्द की ओर से हट जाने के बाद जो वस्तु शेष रह जाती है। उसका अनुभव होना ही अजर अमर नाम है। और उस में ठहराओ हो जाना मेरी समझ मेंअजर अमर नाम है। क्या करूं, मैं जो कुछ कहना चाहता हूं उसके लिए मुझे शब्द नहीं मिलते

विन मुखड़ा से जप करो, नाहिं जीभ डुलावो।
उलटि सुरति ऊपर करो, नैनन दरसावो।

सुरत को कैसे उलटना है ? शरीर को, विचारों को और मन को भूलो। सुरत को शरीर और मन से जब तक नहीं हटाओगे, सुरत ऊपर नहीं जा सकती। मैं ऐसा समझता हूं।

जाहु हंस पश्चिम दिशा, खिरकी खुलवावो।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो।

कबीर साहिब का खिड़की खलवाओ से क्या भाव है। यह तो वही जानते होंगे। मैंने जो समझा है। मैं वह बता सकता हूं। खिड़की क्या है? उदाहरण से समझो। मैं इस मकान में बैठा हूं। जो कुछ इस मकान में है। मैं इन सब वस्तुओं को देख रहा हूं। यदि मैं इस मकान की खिड़की खोलकर उसमें से बाहर की ओर देखूं तो मकान के अन्तर की चीजों से मेरी सुरत हट जायेगी। ऐसे ही पिण्ड अण्ड और ब्रह्मण्ड हमारा मकान है हमारे इस मकान अर्थात हमारे शरीर के अन्तर काम, क्रोध, मोह, अहंकार, भाव विचार संकल्प और रूप रंग समाये हैं और हमारी सुरत इस मकान में बैठी हुई इनमें फंसी हुई है। जब तक सुरत इनको छोड़कर और इनको भूलकर आगे नहीं जायेगी हम इनमें ही फंसे

रहेगें। खिड़की खुलवाने का मैं यह अर्थ समझता हूं। स्वामी जी महाराज ने भी यही फरमाया है।

पिण्ड अण्ड व्रह्मण्ड से पारा, वोह है देश हमारा

त्रिवेनी क्या है। गंगा जमना और सरस्वती जहां मिलती है। बाहर में उसका नाम त्रिवेनी है और अन्तर में इंगला, पिंगला और सुष्मना का इकटठा हो जाना अर्थात शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भानों के इकटठा हो जाने का नाम त्रिवेनी है। त्रिवेनी में नहाना क्या हैं? जब हम नहाते हैं तो हमारे शरीर की मैल उतर जाती है और शरीर स्वच्छ हो जाता है। ठन्डक पहुंचती है और हमको शान्ति मिलती है। अन्तर में मैल का उतरना क्या है? मन को आशायें और तरंगें सब समाप्त हो जाती हैं और सुरत अपने आपमें ठहर जाती है और शान्ति मिल जाती है। यह है त्रिवेनी में नहाना।

पानी पवन के गम नहीं, वोहि लोक मंझारा।
ताही विच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो।

वहां प्रकृति तो है नहीं। वहां क्या है? वहां हमारी वह वस्तु है जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश

को देखती हैं और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। वह हैं हम ? और वही वस्तु अजर और अमर है। हमारी वह अवस्था आविनाशी है। शेष हर वस्तु का नाश है। उस अवस्था का अब इस आयु में मेरा साधन है। उस अवस्था में या उस अजर और अमर नाम में मैं जाता हूं। मगर वहां मुझे अभी तक ठहराओ नहीं मिलता। यह मेरे बस की बात नहीं है। यहां आके मैं फेल हो गया।

जमीं अनमान उंहा नहीं, वो अजर कहावै।
कहै कबीर सोई साधु जन, वा लोक मंझावै।

यह शरीर, मन और मन के विचार, प्रकाश और शब्द अजर अमर नहीं हैं। अजर और अमर वह वस्तु है। जो इन सबकी साक्षी है। मैं वहां जाने का यत्न करता रहता हूं। तुम लोग आ जाते हो। सोचता हूं कि तुम लोगों को क्या दूं। मैं क्या दे सकता हूं। मैंने जो कुछ अनुभव किया है। मैं वह आप लोगों को बता सकता हूं।

दुखियों दीनों पर दया हुई, भव पार किया गुरु प्यारे ने।
निर्धंन को भक्ति योग युक्ति का, दान दिया गुरु प्यारे ने।

गुरु करता क्या है ? संसार में जो दुखी हैं और अशांत है। उनको कहता है कि अपने आपको जानो

और पहचानों कि तुम कौन हो। तुम अज्ञान के कारण अपने आपको संसार में, शरीर में और मन में फंसाकर यहां दुख और सुख भोगते हो। यदि तुम अपने आपमें चले जाओ तो तुम सुखी हो जाओ। वह दर्जा बहुत ऊंचा है। वहां तुम सब कुछ भूलकर सुख प्राप्त करते हो। जैसे जब तुम दिन को सारा दिन काम करने के बाद थक जाते हो और फिर रात को जब तुमको गहरी नींद आती है तो सब कुछ भूल जाते हो और सुख लेते हो। तो फिर सुख कहां है? शरीर में सुख नहीं और मन में सुख नहीं। शरीर और मन को भूल जाने के बाद जो अवस्था आती है उसमें सुख है और प्रकाश और शब्द को भूल जाने के बाद जो अवस्था है उसमें शान्ति है। यही बात गुरु नानक साहिब ने भी कही है।

कहे नानक बिन आपा चीने, मिटे न भरम की काई।

स्वामी जी महाराज ने अपनी बाणीं में इस प्रकार वर्णन किया है।

आप आप को आप पहचानो, कहा और का नेक न मानो।

भवसागर क्या है। सुरत का शरीर मन और प्रकाश में फंसे रहना ही भवसागर है और इससे

निकल जाना भवसागर से पार हो जाना है। फिर जब तुम भक्ति करोगे तो किसकी भक्ति करोगे ? अकालपुरुष की या परमतत्व अधार की जो सबका आधार है और वह आधार तुम्हारे अन्तर में तुम्हारी सुरत है। भक्ति क्या है ?

भक्ति सुनाई सब से न्यारी, वेद कतेब न ताहे विचारी।
सतपुरुष चौथे पद वासा, सन्तन का वहां सदा बिलासा।
सो घर दरसाया गुरु पूरे, बीन बजे जहां अचरज तूरे।
आगे अलख पुरुष दरबारा, देखा जाये सुरत से सारा।
तिस पर अगम लोक इक न्यारा, सन्त सुरत कोई करत विहारा।
तहं से दरसे अटल अटारी, अदभुत राधास्वामी महल संवरी।
सुरत हुई अतिकर मगनानी, पुरुष अनामी जाये समानी।

पहले बाहर के गुरु की भक्ति है। लोगों ने बाहर के गुरु की भक्ति यह समझ रखी है कि गुरु को रुपये दे दो, गुरु को कपड़े दे दो, गुरु को मत्था टेको या गुरु का डेरा या मंदिर बनवा दो। संसारिक रूप से तो एक प्रकार से यह भी ठीक है क्योंकि जो दोगे वह तुमको मिलेगा। गुरु भक्ति के लिए कौन देता है। लोग तो इस लिए देते हैं कि किसी को पुत्र चाहिए,

किसी को बिमारी से छुटकारा चाहिए, किसी को मुकदमा में सफलता चाहिए। गुरु से प्रेम करना और गुरु की बात पर विश्वास करना और अमल करना ही गुरु की भक्ति है। जब तक प्रेम और विश्वास नहीं है। तुम गुरु के सत्संग में नहीं जाओगे और जबतक सत्संग में नहीं जाओगे तुमको असलियत की समझ नहीं आयेगी और भ्रम नहीं जायेंगे। इसलिए सबसे पहले बाहर के गुरु की भक्ति जरूरी है। इसके बिना तुम आगे नहीं जा सकते। मैं इसका खण्डन नहीं करता क्योंकि बाहर के प्रेम के बिना आन्तरिक प्रेम नहीं आ सकता। बाहर का प्रेम क्या है। प्रकृति के किसी भी भाग से प्रेम करना। किसी स्त्री से प्रेम करना ही बाहर का प्रेम नहीं है। मातृ भक्ति पितृ भक्ति, दुखियों की सेवा, परोपकार और देश की सेवा से क्या होता है? अपना धन और अपना समय त्याग करने की बाहर में मन को आदत पड़ जाती है और अपने आराम और अपने विचारों को बाहर में छोड़ने की आदत पड़ जाती है। जब बाहर में बिचारों को छोड़ने की आदत पड़ जायेगी तब अभ्यास के समय अन्तर में भी तुम अपने विचारों

को छोड़ सकोगे । इस वास्ते कहा गया है ।

पहले गुरु की भक्ति कर, पीछे और उपाय ।
बिना गुरु की भक्ति के, जग फंद न काटा जाये ।
मोटे वन्धन जगत के, गुरु भक्ति से काट ।
झीने वन्धन मन के, कटें नाम परताप ।

जिसको बाहर में त्याग करने को आदत नहीं है वह अन्तर में भी विचारों को छोड़ नहीं सकता । तो गुरु ने क्या बताया ।

निर्धन को भक्ति योग युक्ति का दान दिया गुरु प्यारे ने ।

हजूर दाता दयाल जी दोपहर के समय गर्मियों में सत्संगियों से कहा करते थे कि वह मिट्टी उठाकर वहां फेंकों । क्यों ? ताकि उनको बाहर के प्रेम की आदत पड़ जाये । धूप में काम करने से त्याग करने की आदत पड़ जाती है । जो बाहर में त्याग कर सकता है । बह अन्तर में भी अपने विचारों को छोड़ सकेगा और सफल हो जायेगा । यह भक्ति गुरु बताता है ।

मद मान ने अति भरमाया था, माया के फांस फंसाया था ।
अब घट में जलाया अपनी महर से, ज्ञान दिया गुरु प्यारे ने ।

मद मान क्या है ? मद मान यह है कि मैं भक्त हूं, मैं बाप हूं, मैं ब्राह्मण हूं या मैं राजपूत हूं। मैं गुरु हूं। मैं शिष्य हूं या मैं धनो हूं। यह अभिमान है और अभिमान में आदमी अन्धा हो जाता है। केवल इस एक विचार से कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता मेरा सब मद मान जाता रहा। मुझे समझ आ गई कि मैं तो चेतन का एक बुलबुला हू। वह भी अपनी इच्छा से नहीं बना बल्कि उसकी मौज से बना और जब उसकी मौज होगी तो यह टूट जायेगा। और दूसरी बात यह है कि जब मैं कुछ करता ही नहीं तो मैं किस बात का मान करूं। जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने विश्वास का फल मिलता है।

माया की फांस क्या है ? अन्तर के विचारों को सत मानकर उनमें फंस जाना माया की फांस है यह ज्ञान मुझे आप लोगों की दया से मिला और इस ज्ञान से मेरा सारा मद मान चला गया।

योनी के हिडाले झूले थे, अपने आपे को भूले थे।
चित देके चिताया चिताउनी दे अपना करलिया गुर प्यारे ने।

हमारी अवस्था का नाम योनी है। हमारी

अवस्था हर समय बदलती रहती है। कभी हम लालची होते हैं, कभी हम दानी बन जाते है। कभी हम नेकी करते है और कभी हम बुराई करते हैं। ये जो हमारो अवस्थायें हैं। ये हमारी योनियें हैं। चौरासी लाख योनी क्या है? मैंने गिनी तो नहीं। लेकिन मैं यह समझता हूं कि हमारे शरीर के छः चक्र और मन के छः चक्र, कुल बारह चक्र हुये और पांच कर्मइन्द्रियां, बुद्धि और आत्मा ; ये हुये सात। तो $12 \times 7 = 84$ अर्थात हमारी सुरत इन चौरासी अवस्थायों में घूमती रहती है। जब हम स्वस्थ्य होते हैं तो हमारी और अवस्था होती है। बीमारी के समय और अवस्था होती है। किसी परेशानी के समय और हालत होती है। खुशी के समय और हालत होती है। जीवन में हम इन चौरासी योनियों में घूमते रहते हैं और इन योनियों को सत मान कर इनमें फंसे रहते हैं। तो गुरु ने क्या किया? चित अर्थात हित देके चिताया। जब मैं इन में फंसा हुआ था और मुझे समझ नहीं आती थी तो हजूर दाता दयाल जी महाराज न मुझे लिखा था।

काहे बोराना हाय फकीरवा।

यह हाय का शब्द उन्होंने मेरे हित और सहानुभूति के लिए प्रयोग किया था। उन्होंने अपने शब्दों में मुझे बहुत हित दिया। जीव के भले के लिए गुरु सहानुभूति से क्या करता है ?

चौरासी का खटका मिटा सारा, गुरु दया हुई अपरमपारा।
घट फट गया था दे भक्ति का कांटा, अब तो सिया गुरु प्यारे ने

अब मेरा चौरासी का खटका समाप्त हो गया। जिस प्रकार के हमारे विचार होंगे, मरने के बाद उनके अनुसार ही हमारा जन्म होगा। मैं दुखी था अशांत था। अब गुरु का सहारा मिल गया। गुरु ने चिता दिया और मुझे शान्ति मिल गई।

सुरतमन में ज्योति जली जगमग, सुरत शब्द से प्रकट हुआ घट मग।
राधास्वामी नाम दे अब तो किया, उत्साह दिया गुरुप्यारेने।

सुरत शब्द योग से क्या मिला ? रास्ता मिला। क्या रास्ता मिला ? कि वह कौन सी वस्तु है जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। उसमें ठहरने का यत्न करता हूं। मगर अभी तक मुझ से वहां ठहरा नहीं जाता। राधास्वामी नाम क्या है ? हमारी सुरत

के अनुभव हो जाने की अवस्था का नाम राधास्वामी नाम है।

राधा आद सुरत का नाम, स्वामी आद शब्द पहचान।

जब सुरत का शब्द से मेल हो जाता है तब यह अवस्था आती है। आप लोग आये हैं और मुझे अपने अन्तर जाने का अवसर मिला। इस सत्संग से आपको लाभ पहुंचा या नहीं। इसका मुझे पता नहीं। मगर मुझे अवश्य लाभ हुआ। मैं सच्चाई का खोजी था। अपने अन्तर गया। सत्संग कराया। मुझे खुशी मिली और अनुभव मिला। मैं अपने कल्याण के लिए आप लोगों को अपना सत्गुरु समझता हूं। आप लोग अपने विचार से मुझे गुरु मानते हैं। आप अपने विचार से खुशी लेते है और मैं अपने विचार से खुशी लेता हूं। सन्तमत की शिक्षा का हर एक आदमी अधिकारी नहीं है। लेकिन निराश नहीं होना चाहिए। चले चलो जन्म जन्मान्तरों का सिलसिला है। एक दिन पहुंच जाओगे।

सब को राधास्वामी

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक 17 अकतूबर 1975

कातिक मास पाँचवां चला । सुरत शब्द गुरु चेला मिला ।
तक काया कंवलन विधि भारती, कंवल दुवादस काया राखी
प्रथमें कंवल गनेश विलासा, कंवल दूसरे ब्रह्मा वासा ।
कंवल तीसरे बिष्णु प्रकाशा, चतुर्थ कंवल शिवशक्ति निवासा
आतम कंवल पांचवां होई, छटा कंवल परमातम सोई ।
कंवल सातव काल बसेरा, जोत नरंजन का वहं डेरा ॥
कंवल आठवां त्रिकुटी माहिं, सूरज ब्रह्म बसे तोहि ठाहीं ।
नवां कंवल है दसवें द्वारे, पार ब्रह्म बसे निरारे ॥
महासुन्न में कंवल अचिंता, कंवल दसम का वहं बरतंता ॥

राधास्वामी । भारत वासियों ! इस प्रकार की बणियों ने मुझे जीवन में दिवाना बनाया हुआ था और अब भी किसी सीमा तक दीवानगी है । मैं सन्त मत की असलियत को जानना चाहता था । यह वाणी आपने भी सुनी और मैंने भी सुनी । मैं अपनी आत्मा

से पूछता हूं कि क्यों फकीर ! क्या तू इस वाणी के साथ सहमत है ? हाँ भी कहता हूं और नहीं भी। हां इसलिए कहता हूं कि मैंने वाणी के शब्दों के अर्थ को नहीं बल्कि मैंने अपने क्रियात्मिक जीवन से पाठ लिया है और नहीं इसलिए कहता हूं कि वाणी लिखने वालों नें बाणी तो लिख दी मगर इसके सच्च होने का प्रमाण नहीं दिया।

कातिक मास पाँचवां चला, सुरत शब्द गुरु चेला मिला।
तक काया कंवलन विधि भाखी, कंवल दुवादस काया राखी।

यह स्वामी जी महाराज की वाणी है। वह कहते हैं कि सुरत शब्द गुरु मिला। संसार यह समझता है कि किसी को हजूर बाबा सावन सिंह जी मिल गये, सन्त कृपाल सिंह जी मिल गये, बाबा चरणसिंह जी मिल गये या बाबा फकीर मिल गया, तो उसको गुरु मिल गया। मैं इससे सहमत नहीं हूं। गुरु नाम है समझ, विवेक और ज्ञान का। जब तक किसी को समझ, विवेक और ज्ञान नहीं मिलता। उनको गुरु नहीं मिलता। स्वामी जी महाराज इस काया में बारह कंवल बताते हैं। शायद कोई और सन्त (१८) अठारह बतावे। किसी वस्तु को सिद्ध करने के लिए दर्जे या मंज़लें रखी जाती हैं। जैसे डाक्टर लोग

शरीर के भिन्न २ भाग बताते हैं अपनो अपनी खोज अनुसार कोई डाक्टर अधिक बताता है और कोई कम बताता है। मानव जीवन और हस्ती को वर्णन करने के लिए स्वामी जी महाराज ने ये बारह कंवल वर्णन किये है। किसी सन्त ने कितने ही सुन्न वर्णन करके अपने विचारों को प्रकट किया है और किसी ने इनको कोष कहा है।

प्रथमें कंवल गनेश विलासः, कंवल दूसरे ब्रह्मा वासा।

अब हिन्दु यह कहेंगे कि गुदा में गनेश और इन्द्री में ब्रह्म रहता है। लेकिन मैंने क्या समझा है? हमारे शरीर की जो शारीरिक शक्ति है वह गुदा के स्थान पर रहती है। यदि पाखाना (टटी) न आवे तो आदमी बीमार हो जाता है। यदि दस्त लग जायें तो भी बीमार हो जाता है। तो जो शक्ति शरीर में काम करतो है। उसके भिन्न २ नाम हैं। एक शक्ति गुदा के स्थान पर रहकर हमारे शरोर को ठीक रखती है। ऋषियों ने उसका नाम गनेश रख दिया। ऐसे ही इन्द्री के स्थान पर रहकर जो शक्ति काम करती है। उसका नाम ब्रह्मा रख दिया। ब्रह्मा संसार की रचना करता है। जो शक्ति पेट में या

नाभि में रहकर हमारी पाचन शक्ति को ठीक रखती हैं। उसका नाम विष्णु रखा गया। शास्त्र कहते हैं कि विष्णु पालन पोषन करता है। यदि पाचन शक्ति ठीक नहीं है तो आदमी बीमार हो जाता है। इस लिए कहा गया है कि विष्णु पालन पोषन करता है। जो शक्ति शरीर में हृदय में रहतो है उसका नाम शिव रखा गया है। यदि दिल ठीक काम करता है तो आदमी जोवित है अन्यथा मौत हो जाती है। इसलिए कहा जाता है कि शिव संघार करता हैं। लोग इन चक्रों को देखने के लिए आयु खो देते हैं। लेकिन मिलता कुछ नहीं। इन चक्रों से स्वामी जी का क्या भाव है। यह वही जानते होंगे। जिसपर विष्णु नाराज हो गये। वे नष्ट हो गया। क्यों ? जिस की पाचनशक्ति बिगड़ गई वह बीमार हो गया। उसको चैन कहां। उसका शरीर काम नहीं करता। यदि पाचनशक्ति ठीक है तो तुम भी ठीक हो अन्यथा तुम बीमार हो जाओगे। शरीर के छः चक्र कहलाते हैं। हमारी शारीरिक शक्ति हमारे शरीर में इन छः स्थानों पर रहकर विशेष काम करती है।

आतम कंवल पांचवा होई, छटा कंवल परमातम सोई।

पांचवा कंवल आत्मा है। इत और मनन अर्थात गति और सोचना। यह आत्मा का अर्थ है। हमारे अन्तर में हमारा मन है। मन महाचंचल है। जबतक कोई आदमी शरीर और मन को भूलेगा नहीं, वह आत्मा के दर्शन नहीं कर सकता। जबतक किसी को इन चक्रों का भान है। वह आत्मा चक्र में नहीं जा सकता। इनको भूलने के लिए ही सुमरिन और ध्यान दिया जाता है। सुमरिन और ध्यान से इन चक्रों को भूलकर आदमी सीधा ही आत्मपद में चला जाता है। जब आदमी शरीर को भूलकरUniverse में चला जाता है और अन्तर में जब अधिक प्रकाश रूप हो जाता है तब वह परमात्म में चला जाता है। मैं चाहता हूं कि ये सन्त महात्मा बतायें कि इनके साथ क्या बीती। ये अपनी रहनी बतायें मगर कोई बताता नहीं। शरीर में रहता हुआ कोई आदमी जबतक इन चक्रों की परवाह नहीं करता अर्थात अपने स्वस्थ्य का ध्यान नहीं रखता, वह सुखी नहीं रह सकता। इस वास्ते मैं अपने स्वस्थ्य का विशेष ध्यान रखता हूं और यह हर एक आदमी को रखना चाहिए।

कंवल सातवें काल वसेरा, जोत निरंजन का वह डेरा।

हमारी जो शक्ति है उसमें गर्मी है और रोशनी है। यदि गर्मी नहीं तो मौत हो जाती है। यह शक्ति कहां से आती है ? ज्योति स्वरूप से या प्रकाश से। यदि कोई आदमी आगे जाना चाहता है तो उसको इन चक्रों के साधन की आवश्यकता ही क्या है। वह सीधा ही आगे ज्योति स्वरूप में चला जाये। मगर स्वस्थ्य को ठीक रखने के लिए यह साधन आवश्यक है। हजूर दाता दयाल जी महाराज के चोला छोड़ने के एक साल बाद पण्डित वलीराम जी हकीम मेरेपास आये और मुझे स्वस्थ्य को ठीक रखने केविषय में लगभग एक घंटा भाषन दिया। यदि आपकी पाचनशक्ति ठीक है तो आप आसानी से२५ साल और जीवित रह सकोगे। लेक्नि अब तो २५ साल की बजाय चालीस साल हो गये। जो आगे जाना चाहते हैं उनको चाहिए कि वेअपने स्वस्फ्य का ध्यान रखें और सीधे ही ज्योति को पकड़े। यदि ज्योति नहीं पकड़ी जाती तो ज्योति को प्रकट करने के लिए सुमरिन और ध्यान है। गुरु का जो रूप तुम्हारे अन्तर में प्रकट होता है वह तुम्हारा अपना ही मन है, तुम्हारा ही विश्वास है

और तुम्हारी ही श्रद्धा है लेकिन तुमको इसका पता नहीं है इसी एक बात को परदे में रखकर इन धर्मो, पंथों और गुरुओं ने संसार को मूर्ख बनाकर लूटा है और अपना भारवाहक पशु बनाया है। अपनी मान प्रतिष्ठा के लिए संसार को धोखा दिया है और असलियत किसी ने वर्णन नहीं की। यदि की भी तो सैन बैन में, जिसको कि संसार समझ न सका। क्योंकि मन चंचल है और ठहरता नहीं इसलिए ज्योति को जगाने के लिए सुमिरन और ध्यान दिया जाता है। ज्योति या सावित्री एक ही वस्तु है। उसको सनातन धर्म वाले सावित्री कहते हैं। यदि मैं गलत कहता हूं तो सन्तमत वाले या राधास्वामी मत वाले या कोई और महात्मा मेरा खण्डन करें।

द्वापुर युग के बाद अर्थात श्री कृष्ण जी के युग के बाद जब शरीर और मन की शक्ति में कमी आ गयो तब यह ध्यान का रिवाज आरम्भ हुआ। इससे पहले नहीं था। मैं क्यों ऐसा करता हूं कि गुरु स्वरुप का अन्तर में पैदा होना तुम्हारे अपने ही विचार, विश्वास, श्रद्धा और प्रेम का परिणाम है। बाहर से कोई गुरु किसी के अन्तर नहीं जाता।

सुनो ! हज़ारों आदमी प्रतिदिन देश और विदेश में मेरा ध्यान करते हैं। अपने ही विश्वास से अपना काम बना लेते हैं। लेकिन मुझे कोई पता तक भी नहीं होता। हर एक धर्म और पंथ वालों ने अपनी अपनी बढ़ाई के लिए अपने इष्ट का लोगों को ध्यान बताया। रामा पंथी वालों ने राम का ध्यान बताया कृष्णा पंथी वालों ने कृष्ण का ध्यान बताया और गुरुमत वालो ने गुरु का ध्यान बताया। यह सब पंथों के झगड़े हैं। क्योंकि इस ज़माने मे सर्वसाधारण की प्रकृति निर्बल है। इसलिए यह सुमिरन और ध्यान सिवाय विशेष २ आदमियों के बाकी सब के के लिए आवश्यक है। आजकल यदि एक गुरु चोला छोड़ जाता है तो उसके चेलों को लोग कहते हैं कि अब तुम किसी दूसरे गुरु का ध्यान करो। यह विल्कुल ग़लत बात है। जिसका एक रूप का ध्यान बन जाये उसको बदलने की आवश्यकता नहीं। क्यों ? न पहले गुरु ने कुछ दिया और न दूसरा गुरु कुछ देगा। जो कुछ लिया वह अपने ध्यान से लिया। हां ! यदि मन का शान्ति नहीं मिली तो किसी पूर्ण गुरु के सत्संग में जाओ जो तुमको पूर्ण

ज्ञान देकर शान्ति दे। इस बात के लिए दूसरे पूर्ण गुरु के पास जाना चाहिए न कि ध्यान को बदलने के लिए। इसलिए गुरु की महिमा है!

पूरा सतगुरु न मिला, सुनी अधूरो सीख।
स्वांग जाति का पहनकर, कर मांगी भीख।

मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। मगर मुझे किसी बात का दावा नहीं। हो सकता है कि मैंने जो समझा हो वह ग़लत हो।

कंवल आठवाँ त्रिकुटी माहीं, सूरज ब्रह्म बसे तेही ठाही।

जब एकाग्रता आ जाती है तो शरीर की सुद्ध भूल जाती है और मन आगे जाने का यत्न करता है। उस समय उस ज्योति का रंग बदलकर लाल हो जाता है वह ध्येय ध्याता ओर ध्यान की अवस्था है। वहां मन एकाग्र हो जाता है। और आदमी को समझ आ जाती है। एकाग्रता के बिना समझ नहीं आती। जिस प्रकार पहलवान कुश्ती लड़ते समय अपनी सारी शक्ति को एक स्थान पर ले आता हैं ऐसे ही ज्योति को प्रकट करने के लिए मन अपनी शक्ति को एक जगह इक्टठी कर लेता है। शक्ति के एक जगह इक्टठा होने से ज्योति का रंग लाल हो

जाता है। यदि आगे का गुरु नहीं मिला तो आदमी उस लाल रंग का ही साधन करता रहेगा और उसका मस्तिष्क खराब हो जायेगा। आपने गामा पहलवान जो कि अपने समय का रुस्तम था को देखा होगा या सुना होगा जो सदा शारीरिक व्यायाम किया करता था और बहुत शक्ति शाली था। मगर अन्तिम आयु में उसका क्या परिणाम हुआ? चारपाई पर पड़ा रहता था और अपने शारीरिक अंग आदि हाथ पांव को स्वयं हिला नहीं सकता था। ऐसे ही जो त्रिकुटि के स्थान पर सदा लाल रंग के सुर्य का ही साधन करता रहेगा उसके भी मस्तिष्क के विगड़ जाने की सम्भावना है। यह मेरा अनुभव है और इसकी पुष्टि प्रोफेसर एस-एन भारद्वाज जी ने की है। उन्होंने मुझे बताया कि उनका एक मित्र राय सालिग राम जी महाराज का चेला था। हजूर महाराज जी ने उस चेले को एक पत्र में (जोकि भारद्वाज जी ने भी पढ़ा है) लिखा था कि त्रिकुटि में लाल रंग के सूर्य का अधिक समय तक साधन नहीं करना चाहिए अन्यथा मस्तिष्क विगड़ जायेगा मेरे अमली जीवन में भी इसका एक प्रमाण है

वह जवलपुर वाली स्त्री का है। जो त्रिकुटि में लाल रंग के सूर्य में मुझें देखा करती थी और उसके अपने हो बुरे बिचारों के कारण नौ महोनों के अन्तर उसके तीनों वच्चे मर गये। लग भग दो साल का समय हो गया जबकि मैं दौरे पर था तो उस स्त्री का पति मुझे मिला। मैंने उसकी स्त्री की दशा पूछी तो उसने बताया कि वह पागल हो गयी है।

नवां कंवल है दसवें द्वारे, पार ब्रह्म बसे निरारे।

दसवां द्वार क्या है ? सन्तों ने बात को कठिन कर दिया। लोग कानों में उंगलियें डाल कर अभ्यास करते २ और दंसवे द्वार को तलाश करते २ मर गये। मैंने भी बारह २ घण्टे अभ्यास किया है। क्या समझ आयी कि जब मन की वृत्तियें तीन से कम हो कर एक रह जाती हैं तो वहां किसो प्रकार की फुरना नहीं होती। उस अवस्था का नाम दसवाँ द्वार है ओर उसो का नाम निर्विकल्प समाधि है। विविकल्प समाधि की अवस्था में मन न कोई संकल्प उठाता है और न कोई रूप रंग बनाता है।

महासुन्न में कंवल अचिता, कंवल दसम का वह बरतता।

जब मन संकल्प करना छोड़ जाता है तो वहां कोई विचार भाव रंगरूप नहीं होता। क्योंकि वहां कोई चितमन नहीं है। इसलिए उस अवस्था का नाम उन्होंने "अचिंता" रख दिया। अभ्यासी उस अचिंता को तलाश करते २ हार गये। कहते हैं कि वहां अन्धेरा होता है। अरे भोले भाले लोगो! वहां यह बाहर का अन्धेरा नहीं होता। जब वहां कोई ही नहीं और न ही कोई Function है तो अन्धेरा तो अपने आप ही हो गया। इनका नाम खुद मस्ती है या इसका नाम लय हो जाना है।

कंवल इकादश भंवर गुफा पर, द्वादश कंवल मत पद अंतर।

ऐ वर्तमान सन्तों और सुरत शब्द योग के अभ्यासयो! मुझे किसी बात का दावा नहीं। सच्चाई की खोज में सारा जीवन व्यतीत हो गया। जो समझा वह कहता हूं। भंवरगुफा क्या है? जैसे पानी में भंवर अर्थात चक्र बन जाता है। एक ओर से पानी आता है और उसका चक्र बंध जाता है। पानी चक्र खाते २ कभी नीचे तह तक पहुंच जाता हैं और फिर ऊपर आ जाता है और जो

वस्तु उसमें फंस जाती है वह उसमें से निकल नहीं सकती। ऐसे ही विचार का बाहर जाना और ऊसको घेरकर फिर वहां लाना, इसके बार बार के अमल का नाम भंवरगुफा है। उस अवस्था से कोई पूर्ण गुरु निकालता है। महासुन्न में आदमी लय हो जाता है, जड़ हो जाता है। उस जड़ समाधि में से कोई पूर्णगुरु ही निकालता है। यह सब मन का खेल है। जब यह ज्ञान हो जाता है कि यह सब मन का खेल है तो फिर मन से जो फुरना निकलती है वह फिर उसको मोड़कर अपने विचार को वहां वापिस जाता है। इसका नाम भंवर या भंवरू गुफा या सोहंग है और इसो का नाम वेदान्त है। इससे आगें है सतपद। जब आदमी को असलियत के जानने की इच्छा होती है जब वह भंवरगुफा से आगे जाता है। जब यह ज्ञान हो जाये कि यह सब मेरे ही मन का खेल है तो फिर निचले दर्जे के साधन की आवश्यकता ही महसूस नहीं होती। शायद इसीलिए हजूर दाता दयाल जी महाराज ने श्री काशीनाथ मुखतार से कहा था कि आगे आने वाले सन्त भंवरगुफा से ही साधन आरम्भ करेंगे और नोचले साधन छोड़कर

सीधे ही मन पर ठहरने का यत्न करेंगे । मुझे आप लोगों से ज्ञान हुआ । मगर जो आदमी ऊपर चढ़ जाता है वह शरीर की ओर से वेचिन्त हो जाता है । इसलिए सुमरिन ध्यान और भजन की आज्ञा है ताकि आदमी की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियें कायम रहें । यदि आदमी ऊपर ही चला जाये तो उसकी शारीरिक दशा ठीक नहीं रह सकती । उसलिए सुमरिन, ध्यान और भजन सब के लिए आवश्यक है । कई ऐसे भी फकीर होते हैं जो हर समय मन से ऊपर ही रहते हैं । उनकी शारीरिक दशा विगड़ जाती है और उनके शरीर में कीड़े पड़ जाते हैं । लेकिन उनको उन कीड़ों की परवाह नहीं होती ।

घट चक्कर यह पिंड संवारा, तीन चक्र व्रह्मंड अधारा ।

छः चक्कर शरीर के हैं और छः चक्कर मन के हैं । इनसे आगे केवल प्रकाश और शब्द है और इसी का नाम सतपद है । ऐ मेरे मिलने वालो ! मैं यह नहीं कहता कि मेरी बात को सच्च मानो । यदि दिल मानता है तो मानो अन्यथा मत मानो । मैं किसी का ठेकेदार नहीं हूं । मुझे प्रसन्नता है कि मेरा

जीवन सच्चाई से व्यतीत हुआ है। सतपद से आगे तीन चक्कर हैं । जब में प्रकाश को देखता हूं और शब्द को सुनता हूं तो जो वस्तु प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है मैं अपने अन्तर में उसकी तलाश करता हूं । उस तलाश के अन्तर्गत जो अवस्थायें आती हैं। उनका नाम अलख अगम और अनामी है। इसके बाद क्या होता है ? न मैं न तू, न गुरु न चेला। वही अवस्था हो जात है और परमतत्व है :—

तीन कंवल जो ऊपर रहे, सन्त बिना कोई बरन न कहे।

जो उस अवस्था में जायेगा वही उसके बारे बता सकेगा दूसरा नहीं बता सकता ।

षष्ट कंवल तक योगी आसन, नवें कंवल जोगेश्वर वासन।

ये कंवलों के नाम है। जब तक सतपद में या इन चक्करों में कोई वस्तु मौजूद है वह तो आवागवन में आती ही रहेगी । इसलिए योगीजन का आवागवन समाप्त नहीं होता ।

पिंड ब्रह्मंड का इतना लेखा, जोगी ज्ञानी यह तक देखा।

योगी और ज्ञानी का आवागवन समाप्त नहीं

होता। यह और बात है कि उसको ऊपर के लोकों में जन्म मिले।

आगे का कोई भेद न जाने, तीन कंवल सो सन्त बखाने।
कोई छः तक कोई नौ तक भाखे सर्व मये इन भीतर थाके।

यह मतमतान्तर इन कमलों से आगे नहीं गये। मैं राधास्वामी मत का पक्ष नहीं करता। यदि मुझे राधास्वामी मत में सचाई न मिलती तो मैं इसका खण्डन कर जाता क्योंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा।

बड़ा सन्त मत सब से आगे, संत कृपा से कोई २ जागे।

यदि कोई आगे चला गया तो उसको क्या मिला मुझे क्या मिला। मुझे यह विश्वास हो गया कि मैं कौन हूं। मेरी हस्ती सतपद में थी। जब आगे जाता हूं तो मेरी हस्ती अपने आपको खो जाती है। बाकी क्या रह जाता है? क्या कहूं क्या रह जाता है। मैं खोजी हूं। मुझे यह समझ आयी है कि वह एक तत्व है। उसी का यह सारा खेल है। केन्द्र बन जाते हैं। उनमें शू 2 होने लग जाती है। जब ज्ञान हो जाता है कि मैं कौन हूं तो फिर यह समझ आ जाती है कि न मैं पहले था और न मैं बाद में रहूंगा। उसकी

मौज से यह बुलबुला बना और उसकी मौज से टूट जायेगा या यह समझो कि हमारी अपनी हस्ती न पहले जुदा थी और न बाद में जुदा रहेगी। जीवन क्या है।

लब खुले और बन्द हुये, यह राजे जिन्दगानी है।

सारा जीवन सच्चाई से चला। नेकी की, परोपकार किया। साधन अभ्यास किया। मिला क्या? मेर तेरपना चला गया और दौड़ धूप समाप्त हो गयी। अब संसार में रहता हूं। संसार का कारोबार करता हूं। आप के साथ बातचीत करता हूं। मगर जानता हूं कि मैं एक बुलबुला हूं। अब आवागवन का भ्रम समाप्त हो गया। ईश्वर पूजा और खुदा प्रस्ती भी समाप्त हो गयी। वस खामोशी है।

जो पहुंचे द्वादस अस्थाना, सोई कहिये सन्त सुजाना।

जो सतलोक में रहता है वह सन्त है और वह जीवन मुक्त अवस्था है। वह जीवन में खेलता है मगर फंसता नहीं और दुख सुख को महसूस नहीं करता। महसूस तो करता है मगर महसूसियत की चिन्ता नहीं करता। जो इससे आगे चला जाता है वह परमसन्त हो जाता है और उसकी विदेह गति

की अवस्था आ जाती है। जब यह महसूस करता है कि मैं हूं ही नहीं तो विदेह गति तो स्वयं ही हो गयी । यह परमसन्त की अवस्था है। उसका केन्द्र तो तब बनेगा जब वह कुछ बनके किसी स्थान पर ठहरेगा।

सन्तन का मत सबसे ऊंचा, जो परखे सोई धुर पहुंचा।

जो परखे का क्या अर्थ है ?अर्थात जो असलीयत को जानता है। वह वहाँ ठहरता है। मैंने असलीयत क्या समझी ? कि यह जितने भाव विचार और रंग रूप जो मेरे अन्तर आते हैं ये असल में हैं नहीं। ये केवल संस्कार है। मुझे आप लोगों से यह ज्ञान मिला । इसलिए मैं आप लोगों का मान करता हूं और जो कुछ मुझसे हो सकता है वह आपको सेवा करता हूं।

पहुंचे की क्या करूं बडाई, सब मत उसके नीचे आई।
जो मन में प्रतीत न देखो, तौ कबीर गुरुबानी पखो।

जो वहां पहुंच जाता है वह भेद को समझ जाता है और विचारों को कल्पित समझता है। इस बार दिल्ली के दुसहरा के सत्संग में भी मैंने यही कहा था कि मैं चेतन का एक बुलबुला हूं। इसके

प्रमाण में हजूर दाता दयाल जी महाराज का एक शव्द सुनो। मेरा सारा जीवन तलवार की धार पर बीता है।हो सकता है मेरा अनुभव गलत हो। मुझे किसी बात का कोई दावा नहीं। मैं हुं खोजी। कौन हिन्दु या सनातनधर्म के मानने वाला सन्तों की इन वाणियों को सुन सकता है। जिसमें उसके पूर्वजों का खण्डन है।

मैंना मैंना रे मैं न, मैंना मैंना रे मैंना।
मैंना तन पिंजरे में रहकर, वोली बोले रे मैंना।
जब तक मैं है तब तक तू है, मोर तोर का झगड़ा।
"मैं" जब गया २ तब तू भी, अब किसका है रगड़ा।
सतगुरु देनी सैना ॥

सतगुरु सैन बैन करते हैं। मगर मैंने स्पष्ट वर्णन का डण्डा हाथ में ले लिया। जब तक मैं है तब तक तू है। जब ज्ञान हो गया तो न मैं रहा और न तू रहा, सब समाप्त हो गये।

जो 'तू' कहता वह अन्धा है 'मैं' कहता दिवाना।
"मैं मैं" "तू तू" को जो छोड़े, वही है चतुर सयाना॥
यह है सच्ची बैना ॥

मुझे यह समझ आ गई कि वह एक शक्ति है। हम उससे बने और उसी में समा जायेंगे।

जब मैं है तब गुरु नहीं हैं, गुरु जब हैं मैं नाहीं ।
प्रेम की गली तंग है भाई, दोनों कैसे समाहीं ।
दोनों रहते हैं न ॥

मोर तोर माया की रसरी, प्राणी फांस फंसाने ।
तोड़ के रसरी हो गये न्यारे, फिर नहीं वाहे भरमाने ।
हो गये सच्चे मैंना ॥

मुरीद को यह ज्ञान किसी पूर्णपुरुष से प्राप्त होता है। मुरीद का शाब्दिक अर्थ है मरा हुआ । कौन मरा ? जिसको यह ज्ञान हो गया कि मैं हूं हो नहीं । जिसमें अहंकार नहीं है वह है मुरीद ।

बकरी मैं कह गला कटावे, मैं मैं कर मायावे ।
'मैंना' मैं ना बचन सुनावे, बेसन शक्कर खावे ।
कैसी मिठी है 'में न ।'

मैं ना, मैं ना मैंना बोले बोलकर रटन लगावे ।
मैं को त्याग शान्त बन जावे, सुख आनन्द धुन गावे ।
पावे ही नित ही चैना ।

मैं तू भरम विकार है, मन का मन माया का साथी ।
जो मैं कहेगा दुख से मरेगा, कुचले का अहं का हाथी ।
'मैं' तू दोनों हैं ना ।

सुरत की पंछी मैंना बनकर, मैंना मैंना कहती ।
सुन वृक्ष की डाल पे वैठी, दुख सुख अब नहीं सहती ।
दिन है जहां रैना ।

मैं ना मैं ना तू न तू न यह सतगुरु की वाणी।
बानी सुन-सुन जो चित लावे, बने सहज निर्वांणी।
माया फिर कभी व्यापे ना।
राधास्वामी शब्द सुरत की धुन गा-गा के सुनावे।
जो गावे नित गा के सुनावे, भव पिंजरे नहीं आवे।
वह वन जावे मैं ना।

सन्तों की बाणी मेरे अनुभव की पुष्टि करती है

सखिया वा घर सबसे न्यारा, जहं पूरन पुरुष हमारा।
जहं नहिं सुख दुख साच जूठ नहिं, पाप न पुन पसारा।
नहिं दिन रैन चन्द नहिं सूरज, बिना जोति उंजियारा।
नहिं तहं ज्ञान ध्यान नहिं जपतप, वेद कितेव न बानी।
करनो धरनी रहनी गहनी, ये सब उंहा हिरानी।

जब तक हस्ती कायम है तब तक करनी और रहनी कायम रहेगी। जब Realisation हो गया तो फिर रहनी कैसी और करनी कैसी।

धर नहिं अधर न बाहर भीतर, पिंड ब्रह्मंड कछु नाहीं।
पांच तत्व गुण तीन नहीं तंह, साखी शब्द न ताहीं।
मूल न फूल बेलि नहीं बोजा, बिना बृच्छ फल सोहे।
ओअं सोहं अर्ध उर्ध नहिं, स्वासा लेख न कोहे।
नहिं निर्गुन नहिं सर्गुन भाई, नहिं सूच्छम अस्थूलं।
नहिं अच्छर नहिं अविगत भाई, ये सब जग के भूलं।

तुमने ही सब कुछ बनाया था। जब समझ आ गई तो सब कुछ समाप्त हो गया। आप मरे जग परलै।

जहां पुरुष तहवा कछु नाहीं, कहै कबीर हम जाना।
हमरी सैन लखे जो कोई, पावै पद निरवाना।

निर्वाण क्या है ? फूक मारकर उड़ा देना। जब ज्ञान हो गया और अनुभव हो गया तो यह सब कुछ उड़ गया। मानव की अपनी ही खोज का सारा परिणाम है। असलियत का किसी को कोई पता नहीं लगा। अपनी अपनी बुद्धि अनुसार सबने वर्णन कर दिया। सन्तोंने कह दिया कि वहां कुछ नहीं। लेकिन किसी ने कोई प्रमाण नहीं दिया। क्योंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। सात वर्ष की आयु से चला था। अब 89 साल का हो गया। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने आज्ञा दी थी कि शिक्षा को बदल जाना मैंने जो समझा वह कहा।

तुलसी स हिब का मत जोई, पलटू जगजीवन कहैं सोई।
इन संतन का देउं प्रमाना, इन की बानी साख बरवाना।
जोग ज्ञान मत इनहूं भाखा, पुनि संतन मत ऊंचा राखा।

सन्तों ने हालात के अनुसार और समयानुसार लोगों को भक्तियोग और ज्ञान की ओर लगाया। मगर सन्तमत को इन सबसे न्यारा रखा।

जोगी और वेदान्ती भाई, संतन मत परतीत न लाई।

वेदान्ती योगी और ज्ञानी जो हैं। सन्तों ने इनको भूले हुये तो कह दिया और मैं भी समझता हूं कि ये ठीक भूले हुये हैं। मगर सन्तों ने इसका प्रमाण नहीं दिया। मैंने प्रमाण दिया है।

बेद कतेब न पहुचे तहं हीं, थके बीच में रस्ते माहीं।
बार बार कह कर समझाऊं, संतन का मत ऊंचा गाऊं।

सन्तों का मत ऊंचा क्यों है और इस मत से मुझे क्या मिला ? मैं अपने शरीर मन रुह और सुरत का rgoism खो गया। अब मेरा यह अहंभाव कि मैं बाप हूं, मैं बेटा हूं, मैं चेला हूं, मैं गुरु हूं, मैं ब्रह्म हूं, मैं सत अलख और अगम हूं, यह सब समाप्त हो गया।

जो परतीत न लावे या की, जानो काल ग्रसी बुधि वाकी।

किसी बात का विश्वास कराना गुरु का कर्तव्य है। लेकिन विश्वास भी वह गुरु करा सकता है जो

स्वयं आमल है और विश्वास भी वह करेगा जो सचाई का इच्छुक है।

वे कहा जानें मत संतन की, एक मिलावें कांच रतन की।

अहंभाव (rgoism) समाप्त हो जाने के बाद आदमी को शान्ति मिल जाती है। दुख सुख तो आते हैं। मगर वह उनकी परवाह नहीं करता। इससे अधिक यदि सन्त कुछ और कर सकते हैं तो मुझे पता नहीं। सन्तों को भी बहुत कष्ट हुये। मगर सन्तमत शान्ति का मार्ग है। योग और ज्ञान से मन बलवान हो जाता है इससे तुम्हारा संसार अच्छा बन जायेगा। सन्तमत से यदि मुझे कुछ मिला तो शान्ति मिली और शान्ति ही लक्ष्य पद है।

उनसे यह मत खोल न कहिये, सैन जनाय मौन गहि रहिये।

सन्त मता सब से बड़ा यह निश्चय कर जान।
सूफी और बेदान्ती दोनों नीचे मान।
संत दिवाली नित करें सन्त्तलोक के माहीं।
और मते सब काल के योहीं धूल उड़ाई)

इन बाणियों ने मेरे मस्तिष्क को परेशान कर रखा था मैं देखना चाहता था। कि सन्तों के पास क्या हक्क है जो इन्होंने सबका खण्डन कर दिया

अब मुझे असलियत की समझ आ गयी और अब मुझको शान्ति है ।

मेरी समझ में यह आया है कि यह तलाश भी एक भ्रम है । मगर यह अपने वस में नहीं । मैं यह समझता हूं कि यदि खोज को छोड़कर अपना जीवन खुशी, चिन्तारहित, परोपकार और किसी दुखिये को सहायता करने में बीते, तो वह अच्छा रहे । अब मैं किसी दुखिये की सहायता और किसी गरीब का भला करना चाहता हूं

' सब को राधास्वामी,

क्षमा

लेखक :—

सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़

आप समझ गये। आपको होश आ गयी। इसलिए आप क्षमा चाहते हैं। बहुत अच्छा हुआ। आप सीधे मार्ग पर आ गये। लेकिन क्षमा मागने से पहले आपने सोच लिया होगा, विचार कर लिया होगा कि आपसे भूल हो गई और आपकी गलती से किसी का दिल दुखी हुआ। किसी की हानि हुई। आप ऐसा करना नहीं चाहते थे। आपसे भूल हो गई। इसलिए आप क्षमा चाहते हैं।

आपको समझ लेना चाहिए कि क्षमा चाहने का अर्थ क्या है। क्षमा मांगने से आप यह प्रतिज्ञा कर रहे हैं कि भविष्य में आप ऐसी भूल कभी नहीं करेगें। आप अपनी पहली भूल पर पछता रहे हैं। पछताना अच्छा है। लेकिन यदि आप यह समझते

हैं कि क्षमा मांगने से आपको क्षमा कर दिया गया यह भूल होगी। आपको ठीक तौर पर समझ लेना चाहिए। जो भूल आपने की है। इसका दण्ड तो अवश्य मिलेगा, मिलकर रहेगा लेकिन क्षमा मांगने से अपने किये पर पछताने से आपका दिल, आप का हृदय कोमल हो जायेगा और भविष्य में भूल नहीं करेगा और जिसको आपने हानि पहुंचाई है, इससे क्षमा मांगने से इसके दिल को कुछ शान्ति मिलेगी।

लेकिन क्षमा मांगने का आपका क्या अधिकार है ? अधिकार के बिना आप क्षमा कैसे मांग सकते हैं। अधिकार का अर्थ है हक्क। क्या आपको क्षमा मांगने का हक्क है। कैसे हक्क आपको मिला। यदि आप स्वयं किसी को क्षमा कर चुके हैं तो आपको भी क्षमा मांगने का अधिकार प्राप्त हो चुका है। यदि आपने कभी किसी की भूल किसी का दोष क्षमा नहीं किया तो आपको क्षमा मांगने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इसलिए क्षमा मांगने से क्षमा करने के अधिकार को पैदा करो फिर क्षमा मांगो। बिना

अधिकार के क्षमा मांगना भुल है। इसलिए आप सदा दूसरों की गलतियों को भूल जाया करो और दूसरों के दोष क्षमा किया करो।

माना आपको क्षमा मांगने का अधिकार है। आप क्षमा माँग रहे हैं। क्या क्षमा केवल मांगने से मिल जाया करती है यदि क्षमा मांगने पर मिल जाया करती है तो क्षमा बड़ी सस्ती वस्तु है। लेकिन ऐसा नहीं है। क्षमा तो उसको मिला करतो है जो क्षमा मांगने से पहले हानि की पूर्ति कर चुका हो। हानि की पूर्ती कर देने से क्षमा जल्दी मिल जाया करती है और बुरे कर्मों का फल नाश हो जाता है। सुनिए ! आपको एक सच्ची बात सुनाता हूं।

महाराज जी सुनाम रेलवेस्टेशन पर गर्मी की ऋतु में वृक्ष के नीचे पलेटफारम पर अराम कर रहे थे कि इतने में रेलगाड़ी आई। इसमें से दो तीन पुलिस वाले एक डाकू को हथकड़ी लगाये उतरे। पुलिस वाले आपस में बातें कर रहे थे कि यहां का स्टेशन मास्टर एक वड़ा भारी सन्त है और इनकी चारपाई की और संकेत कर रहे थें। आखिर पुलिस वालों

ने सोचा कि दर्शन कर चलें। चारपाई के समीप आये तो डाकू के यद्यपि हथकड़ी दोनों हाथों में लगा हुई थी फिर भी वह महाराज जी को दोनों हाथों से पंखा करने लग गया महाराज जी की आंख खुली तो पूछा आप कौन हैं ? इसने उत्तर दिया मैं डाकू हूं कई कतल किए हैं। महाराज जी ने कहा। नहीं आप डाकू नहीं हैं। आप कातल नहीं हैं। कातल और डाकू सच्च नहीं बोला करते। आप तो मेरे भक्त हैं। पुलिस वाले डाकू को साथ ले गये महाराज जी के दिल में न जाने क्या विचार आया महाराज जी उठे और सीधे पुलिस कप्तान के पास गये और कहने लगे कि आपने हमारा भक्त पकड़ लिया है। इसको छोड़ दीजिए। पुलिस कप्तान महाराज जी को अच्छी प्रकार जानते थे। कहने लगे, महाराज जी ! वह तो वड़ा भारी प्रसिद्ध डाकू और कातल है। इसको कैसे छोड़ सकते हैं। खैर बात आई और चली गई। लेकिन पूलिस कप्तान के दिल में महाराज जी का विचार रहा और उन्होंने इस डाकु को वायदा मुआफ गवाह बना लिया।

कुछ समय के बाद जब वह छूट कर आया तो महाराज जी के दर्शनों के लिये वह आया। महाराज जी ने इसको अपने घर बुलाकर खाना खिलाया तो सब इकट्ठे हो गये और नाना प्रकार को बातें करने लगे। डाकू महाराज जी को नमस्कार करके चला गया। बाद में पता लगा। उसने बहुत पश्चाताप किया और रुपया कमाकर, जिनके घर उसने डाके डाले थे। इनको इनका धन वापिस करता रहा और साधु होगया।

यह है अपने दोषों केलिए क्षमा मांगना। फिर क्षमा सहायता करती है। ऐसी क्षमा मांगा करो। गुरु आपका कल्याण करेगा।

जो हानि को पूरा करता है, यह समझ कर कि इससे भूल हुई है, ऐसे पुरुष को क्षमा अवश्य मिलेगी।

यह भी कोई क्षमा है कि आज क्षमां मांगी और फिर बुरा कंम करना आरम्भ करदिया यह क्षमा न हुई। मजाक हुआ। आपको चाहिए व्यवहार को ठीक रखें ताकि नाराज़गी न होनें पाये। जीवन का सुधार

इसीमें है । यदि कोई भूल हो जाये तो क्षमा मांग ली जाये । क्षमा मांगने का अधिकार पैदा करो । जिसकी हानि हुई उसकी हानि की पूर्ती की जाये यह वास्तविक क्षमा समझी जायेगो अन्यथा कुछ लाभ नहीं ।

पत्र व्यवहार द्वारा ज्ञान

(श्री रामा शंकर लाल जी गोरखपुर निवासी के पत्र के उत्तर में)

प्यारे भाई रामा शंकर लाल जी राधास्वामी ।

तुम्हारा काफी लम्बा चौड़ा आठ पृष्ट का पत्र मुझे मिला । क्या उत्तर दूं ? मैंने जो कुछ लिखा या कहा, वह मेरा निज अनुभव है । किसी से मांगा हुआ नहीं है । आप हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज के शिष्य हैं । आपके प्रश्नों का उत्तर उन्हींके शब्दों द्वारा देता हूं । जिस प्रकार एक छोटा बच्चा ऊंची शिक्षा को नहीं समझ सकता और जिस जिस श्रेणी में वह पढ़ता है । उसका अध्यापक उसी श्रेणी के अनुसार उसको आगे पढ़ाता जाता है । अब हजूर दाता दयाल जी महाराज के शब्द सुनो । इनके अनुसार तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दूंगा ।

प्रेम छाया से किया, छाया का गुण जाना नहीं ।
तूने अपना और उसका, रूप पहचाना नहीं ।

ब्रह्म में माया है शक्ति, शक्ति दुखदाई कहां।
भरम से बलवान ने, बल पाके बल माना नहीं।
माया छाया एक है, दौड़ो तो दौड़े और चले।
रुकने से रुकती है. उससे भय कभी खाना नहीं।
जान लो पहचान लो, और अपनी शक्ति मान लो।
जान कर पहचान कर. भ्रान्ति में चित लाना नहीं।
राधास्वामी संग कर. कुछ दिन कि तुमको ज्ञान हो।
ज्ञान पाकर भूल के. चक्कर में फिर आना नहीं।

सजन कोई सांच न बात कहे

योगाचार योग रस माते, क्षणिक ज्ञान क्षण भंगी।
मध्यम वाले मध्य सामने. शून्यवाद सरबंगी।
सांख्य गिनावे गिनती सबकी योग समाधी गावे।
वेदान्त वेदान्ती की आशा, करम में करमी फंसावै।
जैसी मन की भई कल्पना, जैसा खेल खिलाया।
खटपट में षट दर्शन भूले. अन्त गिया क्या छाया।
पूरा खेल किसी का नाहीं, खेलें खेल खिलाड़ी।
किसको बताऊं पंडित मूरख, किसको ज्ञानी अनाड़ी।
गुरु की दया साध की संगत, सार तत्व लख पाया।
राधास्वामी चरन कमल गह, छूटी माया छाया।

तुमनें अपनें पत्र में लिखा है कि हजूर महाराज राय साहिब सालिग राम जी महाराज का रूप तुम्हारे अन्तर प्रकट हुआ था। लेकिन आप उनको जानते नहीं थे और न ही तुमने कभी उनका फोटो

देखा था। तुमने यह घटना हजूर दाता दयाल जी महाराज को लिखो तो उन्होंने कहा कि तुम बड़े भाग्यशाली हो हजूर महाराज तुमको सम्भालते हैं। इस बारे तुम मुझसे प्रश्न करते हो। इसका उत्तर सनो :—

हजूर महाराज जी का जो रूप तुम्हारे अन्तर प्रकट हुआ या हजूर दाता दयाल जी महाराज का जो रूप तुम्हारे या मेरे या और सत्संगियों के अन्तर प्रकट होता है या मेरा रुप लोगों के अन्तर प्रकट होता है। यह हर एक व्याक्ति को अपनी ही छाया है। छाया जानते हो ? एक तो है पेड़ और दूसरी उसकी छाया होती है। तुम्हारे अन्तर हजूर महाराज जी का रूप क्यों प्रकट हुआ ? एक तो तुमने हजूर महाराज जी का नाम सुना हुआ था और दूसरे तुम्हारे दिल में यह बात बैठी हुई है या संस्कार पड़ा हुआ था कि हजूर महाराज जी पूर्ण धनी और परमसन्त थे और तीसरे क्योंकि हजूर दाता दयाल जी महाराज उनका ध्यान करते थे और तुम हजूर दाता दयाल जी महाराज का ध्यान करते थे। इसलिए हजूर महाराज जी का रूप तुम्हारे अन्तर प्रकट हुआ।

ऐसी घटना मेरे साथ और भाई नन्दुसिहं जो के साथ भी होती रही। मेरे अन्तर भी स्वामी जो महाराज और हजूर महाराज का रूप प्रकट हुआ करता था एक और घटना सुनो। मेरे पास गोपालदास नामी एक सत्संगी रहता है। मेरे पास आने से पहले जबकि वह मुझे जानता भो नही था। वह एक दो सत्संगियों के साथ बैठकर अभ्यास करने लगा और उसके अन्तर मेरा रूप प्रकट हुआ। फिर वह मेरे पास आया और सारा समाचार मुझे बताया। लेकिन मैं तो उसके अन्तर गया नहीं था। उसका कारण क्या था ? जिन सत्सगियों के साथ बैठकर वह अभ्यास करने लगा था। वे मेरा ध्यान करते थे। यह Law of Radiation है। लेकिन है यह सारे का सारा छाया पुरष। यदि समझ सकते हो तो समझो अन्थया कुछ दिन मेरी संगत करो। संगत में क्या होता है ? यह सूक्षं विषय है जो शब्दों में वर्णन नहीं हो सकता। एक का विचार और भाव प्रेम और दृष्टि द्वारा दूसरे के दिल में प्रवेश हो जाता है। जिस प्रकार छोटा बच्चा मां की बात को तो समझता नहीं और न ही मां बच्चे की बात को

समझ सकती है। क्योंकि वह बोल नहीं सकता लेकिन जब दोनों प्रेम से एक दूसरे की ओर देखते हैं और दोनों दिल मिले हुए होते हैं तो एक दूसरे का अकस एक दूसरे पर पड़ता है और दोनों भाव को समझ लेते है। यह तुम्हारे एक प्रश्न का उत्तर है

तुम्हारा दूसरा प्रश्न यह है कि मैं (फकीर) ने कहीं लिखा है कि हजूर दाता दयाल जी महाराज ने कहा है कि वह गौतम बुद्ध थे और मैं (फकीर) उनका भिक्षु था। इसलिए इस जन्म में हमारा मेल हुआ और तुमने यह भी लिखा है कि हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे (फकीर) के बारे फरमाया था कि मैं (फकीर) पिछले जन्म में गुरु हरगोविन्द था। आप यह प्रश्न करते हैं कि इससे तो यह सिद्ध हुआ कि महात्मा बुद्ध और गुरु हर गोविन्द मोक्ष को प्राप्त नहीं हुये।

अब इसका उत्तर सुनो। ये बातें मुझे हजूर दाता दयाल जी महाराज ने कहीं। लेकिन मुझे इस बात के बारे कोई ज्ञान नहीं। उन्होंने कैसे कहीं ? यह वह जानते होंगे। लेकिन गोतम बुद्ध को मोक्ष नहीं

मिली। इसका एक प्रमाण तो स्वामी जी महाराज को बाणी जहां उन्होंने लिखा है कि राम, कृष्ण जैन, बुद्ध, ईसा मसीह और हज़रत मुहम्मद ये सब काल में रहे। मेरा अनुभव इसको सत मानता है। जो व्यक्ति अपने मन के संकल्पों में रहेगा। वह किसी तरह भी अपनी हस्ती को खो नहीं सकता। उसका मैंपना चाहे वह मैंपना शारीरिक है या मानसिक है और चाहे वह आत्मिक है। इसलिए वह कहीं आवश्य ठहरेगा। चाहे वह किसी लोक में ठहरे या किसी भी स्थान पर ठहरे, इसका अनुभव मुझे सत्सगियों से हुआ। जब सत्संगी कहते हैं कि वे अपने अन्तर मेरे नूरानी रूप को देखते हैं और वह रूप भिन्न २ शकलों में उनकी सहायता करता है। लेकिन मैं नहीं होता तो फिर क्या सिद्ध हुआ? किजबतक कोई व्यक्ति या किसी की सुरत किसी रंग रूप विचार या भाव के साथ बन्धी हुई है उसकी हस्ती कायम है और जबतक किसी की हस्ती कायम है। वह हस्ती कहीं न कहीं अवश्य ठहरेगी। इसलिए फिर मुक्ति कैसी ?

यदि मैं यह मान लूं कि जो पूर्वज मरे हुये हैं और यदि वे लोगों के अन्तर सचमुच ही आते हैं

तो फिर यह मानना पड़ेगा कि वे अभी तक चक्र में हैं और मुक्त नहीं हुये। कुछ वर्ष हुये, मेरे साथ एक घटना हुई। भाई नन्दुसिंह जी और श्री पिंगल राव के साथ हज़ूर दाता दयाल जी महाराज मेरे Vision में आये। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज के हाथ में मेरी कितावें थी। उन्होंने कहा कि फकीर! पांच सौ रुपये लाओ। मैंने अपने ट्रंक में से पाँच सौ रुपये निकालकर उनको दे दिये। फिर उन्होंने कहा कि फकीर! तेरा मेरा वायदा था कि तुमको मंज़ल पर पहुंचा कर फिर मैं जाऊंगा। इसलिए अब मैं जाता हूं। वह वैठ गये और उनके शरीर को आग लग गई। शरीर जलकर खाक हो गया और मैं दुखी हुआ। उसके बाद कई बार फिर हज़ूर दाता दयाल जी मेरे अन्तरआये। यदि असली दाता दयाल जी महाराज जो मेरे अन्तर आये थे चले गये होते तो फिर क्यों आते? वे जो पांच सौरुपये उन्होंने मांगे और मैंने दिये। क्योंकि मैं मानवता मंदिर बनवा रहा था और मुझे रुपये की आवश्यकता थी तो जो दाता दयाल जी महाराज मेरे अन्तर प्रकट हुये और रुपये मांगे वह मेरा अपना ही आत्मा था।

तुमने लिखा है कि जब ये बड़े २ सन्त और

महात्मा स्वयं मुक्त नहीं हुये तो दूसरों को मोक्ष दिलाने का वायदा कैसे करते हैं और कहते हैं कि मेरी शरण में आजा। मैं तुमको बचा लूंगा।

देखो ! एक डाक्टर के पास एक बीमारी का नुसखा है जिससे कि बहुत से लोग स्वस्थ हुये है और हो रहें है। लेकिन वह डाक्टर उसी बीमारी में ग्रस्त होकर मर जाता है तो इसका यह अर्थ नहीं कि वह दवाई गलत है। तुमने शरण में जाने का भाव नहीं समझा। तुम डाक्टर की शरण में चले ज़ाओ। उसकी मुठी चापी करो। उसको पैसे दो। क्या तुम स्वस्थ्य हो जाओगे ? जब तक उसकी दवाई नहीं खाओगे, उसके कहने अनुसार परहेज नहीं करोगे, तुम स्वस्थ नहीं हो सकते। ऐसे ही गुरु दरदे दिल रखकर भूले और भटके हुये जीव को उसका दुख दूर करने के लिए उसको कोई युक्ति बताता है। जो आदमी किसी सतपुरुष के दरबार में जाकर उसकी बात को ध्यान से सुनता नहीं, समझता नहीं और उसपर अमल नहीं करता उसने सत्गुरु की शरण नहीं ली। स्वामी जी महाराज ने कहा है।

सब ही आये सतगुरु आगे दरश न पकड़ा बचन न लागे।
कहो अस सत्संग से क्या फल पाया, वक्त गया और जन्म
गवाया।

तुम्हारा तीसरा प्रश्न यह है कि यदि हम यह मान लें कि कबीर साहिब मुक्त हो गये तो उन्होंने तो एक शब्द में कहा है।

जुगन जुगन हम आन चिताये, कोई कोई हंस हमारा हो।

इसका पता तो कबीर साहिब को होगा। लेकिन मैं जो समझता हूं वह यह है। सुनो! तुमको किसी समय किसी आदमी पर क्रोध आ जाता है और क्रोध की अवस्था में उसको कह देते हो कि मैं तुम्हारा खून पी जाऊंगा या तुम्हारा सर्व नाश कर दूंगा, यद्यपि तुम कर नहीं सकते मगर जनून में आकर कह देते हो। हो सकता है कि कबीर साहिब आते होंगे मगर मुझे इसका पता नहीं। ये जितनी बातें है। ये सब रोचक और भयानक हैं। जीवों को किसी बात का विश्वास कराने और आकर्शित करने के लिए रोचक और भयानक बातें कही जाती हैं और इस रोचक और भयानकपने को संसार चाहता है। मैं भी कह दिया करता हूं और लिख भी देता हूं कि मैं

अवतार हूं और समय का सन्त सत्गुरु हूं। यह भी एक रोचक बात है ताकि जो लोग असलियत को जानना चाहें वे मुझे ऐसा समझकर मेरे पास आयें और मेरी बात को समझें। कबीर साहिब ने जहां यह कहा है कि 'जुगन जुगन हम आन चिताये' वहां उन्होंने एक शब्द में यह भी कहा है।

उत ते कोई न आया, जासे पूछू जाये।
इत ते सब कोई जात है, भार लदाये लदाये।

अब तुम स्वयं ही सोचो कि कबीर साहिब के दोनों शब्दों में कितना अन्तर है। एक शब्द में तो कहते हैं कि हम 'जुगन जुगन आके चिताते है और दूसरे में कहते हैं कि उधर से कोई लौट के आया नहीं जो बात बताये। ऋषियों के कथनमें भेद है और सन्तों की वाणी में भी भिन्नता है। जो इन वाणियों में फंसा, वह भ्रम में आ जायेगा। इसीलिए बार बार कहा जाता है कि किसी रहस्य ज्ञाता को संगत करो। संसार में अनेक विचार धारायें हैं। किस किस के पीछे दौड़ोगे? अपने निजी अनुभव के आधार पर विश्वास करते हुये शान्ति को प्राप्त करो। यही बात राधास्वामी दयाल ने कही है।

आप आप को आप पहचानो, कहा और का नेक न मानो।

इस 'और' मैं बाहर का गुरु भी आया कि नहीं आया ? गुरु वह है जो जीव को उसकी प्रकृति के अनुसार चलाकर उसको अनुभव करा देता है। मैंने यह समझा है। मगर मुझे किसी बात का दावा नहीं।

आपने मेरे किसी लेख का हवाला देते हुये लिखा है कि मैं 'फकीर' ने राधास्वामी मत को मानव धर्म समझा है और समय आने पर यह मानव धर्म सिद्ध होगा। ऐ रामा शंकर लाल ! मैंने ठीक लिखा है। मानव कौन है।

गुरु पशु नर पशु तिरया पशु वेद पशु संसार।
मानुष ताहे जानिये, जा में विवेक विचार।

मानव जाति अपने अज्ञान के कारण नाना प्रकार के भ्रमों और संशयों में फंसी हुई है और इस कारण वह हर ओर से बट गई है। यदि मानव को असलयित और सच्चाई का पता लग जाये कि वह है कौन, तो उसको शान्ति मिल सकती है। अब तुम देखो कि न तो मैं किसी के अन्तर जाता हूं, न हजूर दाता दयाल जी महाराज जाते थे, न राम किसी के अन्तर आते हैं और न ही कृष्ण आते हैं। इस अज्ञान

के कारण अनेक प्रकार के धर्म पंथ और गद्दियां बन गई और आपस में द्वेष आ गया और घृणा पैदा हो गई। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने अपने अन्तिम सत्संग में यह कहा था कि लोग कहते हैं कि मेरा रूप उनके अन्तर गया और यह किया और वह किया। मगर मैं कहीं नहीं जाता। ये उनके अन्तिम आयु के शब्द हैं। यदि पहले कह देते तो धाम कैसे बनती ? यदि मस्तिष्क रखते हो तो सोचो। मेरा उनके साथ अति प्रेम था। लेकिन वह मुझे सदा यही कहा करते थे कि फकीर ! तुम अभी काल और माया से नहीं निकले। मैं प्रार्थना करता कि महाराज ! मैं कैसे निकलूंगा तो फरमाते कि मेरी आज्ञा मानते चलो। एक दिन निकल जाओगे। यह काम जो उन्होंने मुझे दिया था। यह इस भेद को समझने के लिए दिया था। पिछले समय में इस रहस्य को खोलने का दस्तूर नहीं था। यह भेद किसी विशेष अधिकारी शिष्य को ही दिया जाता था और फिर उसे यह कह दिया जाता था कि यह भेद किसी को न बताना जैसे कि कबीर साहिब ने धर्म दास को कहा था।

धर्मदास तोहे लख दुहाई, सार भेद नहीं बाहर जाई।

क्योंकि मेरे जिम्मे जगत कल्यान का कर्तव्य है और शिक्षा को बदल जाने की आज्ञा है। इसलिए मैंने तेरे जैसे भरमे हुये जीवों के लिए इस भेद को खोल दिया। अच्छा किया या बुरा किया। यह मुझे पता नहीं। मैंने जो समझा वह कहा। मगर मैं यह नहीं कहता कि यही ठीक है। हो सकता है कि यह गलत हो।

क्योंकि सन्तों ने इस असलियत के आधार पर पंथ चलाये कि यहां सब काल और माया का खेल है, तो यदि यह विचार फैल जाये तो फिर मानव धर्म आया या न आया? मेरे विचार में यह सन्तमत अभी किशोर अवस्था में है। यह फैलेगा और सतयुग का दौर आयेगा मगर अभी कुछ समय लगेगा। काल का चक्र चलता रहता है।

इस प्रश्न में तुमने लिखा है कि मैं (फकीर) ने तशरीह हिदायत नामी कताब में एक लड़के के बारे कहा था। क्या वह लड़का आ गया? सुनो! वह दृश्य जो लड़के का मैंने देखा था। वह कहीं बाहर से तो नहीं आया। यह मेरे अपने ही मन का जज्बा था। मेरा अपना ही विचार था। जिसने उस

लड़के का रूप धारण किया और मुझे कहा कि तुम बेचिन्त रहो, मैं मानवता को फैलाऊंगा। क्योंकि मेरे अन्तर मानवता को फैलाने का जज्बा और तड़प थी। मेरे ही आत्मा ने मेरी तड़प और बेचैनी को दूर करने के लिए यह दृश्य दिखाया। हजूर दाता दयाल जी महाराज कहा करते थे कि जहां दरद है वहीं दवा है। समझ सकते हो तो समझो, नहीं तो कुछ दिन और टकरें मारो।

मेरा जीवन सफर करता हुआ आ रहा है। जो विचार मेरे बीस साल पहले थे आज वह मेरे अनुभव ने गलत सिद्ध कर दिये। जीवन उन्नति करता हुआ चला आ रहा है। मैं यह समझता हुं कि जब तक मानवता के संस्कार नवयूवकों में नहीं आयेंगे, मानवता फैल नहीं सकती और अब भी मेरा यह अनुभव है कि मानवता की शिक्षा बच्चों से आरम्भ होनी चाहिए।

तुमने एक प्रश्न यह किया है कि पबित्र विभुति राय सालिग राम साहिब जी महाराज ने कहा था कि मैं एक बार फिर सन्तमत में प्रकट हूंगा और Administration में आऊंगा और उस समय देश,

सरकार और धर्मों के बिगड़े हुये हालात का ठीक ढंग से सुधार हो जायेगा। तुमने पूछा है कि हजूर महाराज जी की यह भविष्य वाणी कब तक पूरी होगी।

हजूर महाराज जी ने यह जो कुछ कहा। इसके भाव को तो वही जानते होंगे। लेकिन मैं जो समझता हूं वह यह है कि क्योंकि हजूर महाराज जी के दिल में पंथ चलाने का प्रबल जज्वा था। इसलिए उस जज्वे में आकर उन्होंने ऐसा कहा। हजूर महाराज अपने बुढ़ापे की आयु में अपने मुंह में पानी भरकर वृक्षों पर छिड़का करते थे और कहा करते थे कि किसी समय ये वृक्ष भी राधास्वामी नाम जपा करेंगे। वह क्या था। उनका अपना ही जज्वा था। यह कहने का ढंग है उन्होंने जो कहा कि मैं Administration में आऊंगा वह ठीक है। अब तुम देखो वर्तमान समय में ऐमरजैंसी ने कितना सुधार किया है। ब्लैक मारकीट करने वालों, Smuggling करने वालों, चार सौ बीस और हेरा-फेरी करने वालों का आज क्या परिणाम हो रहा है। हजूर महाराज जी का जो विचार है वह

आवश्य फैलेगा और एक समय ऐ
महात्मा लोग और धार्मिक संस
हेराफेरी करके और झूठा प्रापेगण्डा
अपने जाल में फंसा रहे हैं ये भी जेलों में जा
प्रकृति का यह नियम है कि जब कोई वस्तु अधिकता पड़क जाती है और सीमा से अधिक बड़ जाती है तो उसका कोई न कोई Anti (उसको ठीक मार्ग पर लाने वाला) पैदा हो जाता है।

यह कलयुग है। इसमें ज्योतिष के हिसाब से हर ग्रह के अन्तर नौ ग्रह भुगत जाते हैं। ऐसे ही कलयुग के अन्तर चारो युग भी भुगत जाते हैं। यह मेरा अनुभव है। हो सकता है कि मैं भूल में हूं। मगर कलयुग में सतयुग की ग्रह दिशा अवश्य आयेगी।

तुमने अपने प्रश्न में किसी पुराण का हवाला देते हुये लिखा है कि प्रलय के समय पश्चिम से सात सूर्य इकट्ठे ही कर चढेंगे और दक्षिण में एक साथ ही अस्त हो जायेंगे और प्रलय हो जायेगी मुझे क्या पता कि ऋषियों के पास ऐसी बात कहने का क्या अधिकार था। मगर इतना जानता हूं कि जो वस्तु

दा होती है वह नाश अवश्य होती है "जो उपजे सो विनसे"।

प्रलय का वर्णन स्वामी जी ने भी किया है। काश ! तुम इतना लम्बा पत्र लिखने की बजाय मेरा सत्संग करते। लेख में एक विचार के सारे भाव नहीं आ सकते। मगर क्योंकि तुम मेरे गुरु भाई हो। इसलिए भाई के नाते उत्तर दे रहा हूं अन्यथा उत्तर देना नहीं चाहता था।

तुमने लिखा है कि राधास्वामीमत की वाणी में या कबीर साहिब ने या गुरु नानक जी ने अनेकों सूर्यों का वर्णन किया है। लेकिन तुमने केवल तीन रंग के (नीला, पीला और लाल) तीन सुर्य ही अपने अन्तर देखे और वे भी चमकीले सूर्य नहीं थे। सुनो ! स्वामी जी की वाणी है।

भक्ति चन्द्रमा और सूरज ज्ञाना, दोनों गए छपाई।

मैं समझता हूं कि सुर्य नाम है ज्ञान का। आदमी के अन्तर अनेक प्रकार के ज्ञान आते हैं और हर प्रकार का ज्ञान और अनुभव उसको एक विशेष प्रकार की खुशी और सरूर देता है। कबीर साहिब ने अपनी वाणी में (१६) सूर्यों का वर्णन किया है

"शोड़श भान" । मेरी समझ में वे सोहल सुर्य यह हैं। पांच कर्म इन्द्रियां, पांच ज्ञान इन्द्रियां, (चार) अत:करण चतुषृय बुद्धि और आत्मा । अर्थात सोलह प्रकार के ज्ञान और चेतनतायें अभ्यासी अपनें अन्तर में अनुभव करता है । तुम इस Space को देखो। विज्ञान ने सिद्ध किया है कि अनेक सूर्य और अनेक चाँद हैं । ये महापुरुषों के अनुभव हैं और ये अनुभव उनको बाहर के संसार के प्रभाव के कारण हुये ।

तुमने लिखा है कि अभ्यास में तुरिया की अवस्था में तुमने नूर का एक बहु बड़ा समुद्र देखा। जिसमें नूरानी लहरें उठती थीं और हर जगह नूरानी भंवर थे और नूर ही नूर था और उसके बाद फिर तुमको आजतक नूर दिखाई नहीं दिया । सुनो ! यदि मैं भूल में नहीं हूं तो हो सकता है कि तुमनें यह दृश्य जो अपने अन्तर में देखा किसी को बता दियाहो । वह नूर जो कुछ तुमने अपनें अन्तर में देखा, वह क्या था ? हर एक मानव के अन्तर ऊपर के सब सितारों की किरणें मौजूद हैं और उनसे ही आदमी की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक प्रकृति बनती है । जब कभी मानव अपने अन्तर शिवनेत्र

के ऊपर जाता है तो वहां ऊपर के सितारों की किरणों के जो कण हमारे मस्तिष्क में मौजूद हैं। जिस प्रकार खुरदबीन में आदमी को न दिखाई देने वाली वस्तु भी बड़ी दिखाई देती है वे कण हमको बहुत बड़ी शकल में और चमकदार अवस्था में दिखाई पड़ते हैं और उनको देखकर हम चका चौंद हो जाते हैं। मेरे साथ भी ऐसा होता रहा है। तुमने लिखा है कि तुम्हारा प्रकाश बन्द हो जाने से तुम घबराहट में थे कि शायद तुम्हारा अभ्यास ठीक नहीं। तुमने हज़ूर दाता दयाल जी महाराज को लिखा तो उन्होंने उत्तर दिया कि यह सुरत प्रकाश योग नहीं है, यह सुरत शब्द योग है और तुम परेशानी नहीं होनी चाहिए।

ये प्रकाश के जितने भी दृश्य हैं। ये सब काल के हैं। काल रचना करता है और प्रकाश से ही रचना होती है। इसलिए यदि प्रकाश दिखाई नहीं देता और सितारे आदि दिखाई नहीं देते तो कोई बात नहीं। लक्ष्यपद प्रकाश ही नहीं है। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने एक शब्द में लिखा है।

अखतरो शमशो कमर सर पे चमकते थे कभी।
आज इन सब की ज़िया जेरे कदम देखते हैं॥

तुमने अपने पत्र में मुझे लिखा है कि तुमने धाम में तुम्हारे अन्तर प्रकाश न होने की मुझसे शिकायत की थी और मैंने तुमको शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य रखने पर बल दिया था। तुम्हारा विवाह 16-17 साल की आयु में हुआ। खूब गृहस्थ भोगा। फिर स्त्री स्वर्गवास हो गई। दो लड़के और तीन लड़कियों के आप बाप हैं। फिर आपने अपने आपको सम्भाला। अब आप शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य रखते हैं। कभी भूल भी हो जाती होगी। आप अन्तर में प्रकाश न होने से दुखी हैं। लेकिन शब्द आपका जारी है। आप चाहते हैं कि आपके अन्तर प्रकाश हो। आपके अन्तर प्रकाश अब भी हो सकता है। शर्त यह है कि आप शब्द का साधन छोड़ दें और केवल ध्यान की ओर बल दें। सुरत जब शब्द को पकड़ लेती है क्योंकि शब्द आकाश का गुण है और आकाश से अग्नि पैदा होती है। इसलिए जो व्यक्ति शब्द का ही साधन करेगा उसके अन्तर प्रकाश कैसे आयेगा और यदि आयेगा भी तो बहुत कम। क्यों ? क्योंकि वह तो इस दर्जे से ऊपर चला गया। इसलिए यदि आप

प्रकाश देखना चाहते हैं तो शब्द का साधन आपको छोड़ना पड़ेगा । आप कहते हैं कि पहले आप जो आवाजें घण्टा, शंख ओम या ढोल आदि की सुना करते थे । वे अब समाप्त हो गए । ये होने ही चाहिए । मैंने एक किताब 'पांच नाम और पांच स्थान' लिखी है । वह हिन्दी में भी छपी है और उसका नाम है पांच नाम की व्याख्या वह आपको भेज रहा हूं । उसमें मैंने घण्टा, शंख, बादल की गरज, मुरला और बीन आदि यह जितनी आन्तरिक आवाजें हैं सबके पैदा होने का असली कारण बताया है, जोकि आज तक किसी सन्त ने नहीं बताया । अब मेरी भी यही दशा है । मैं यदि अब घण्टा, शंख या मुरली आदि सुनना भी चाहूं तो भी नहीं सुन सकता । क्यों? जिस प्रकृति से ये शब्द बनते हैं या पैदा होते हैं । मैं उस प्रकृति से आगे चला गया ।

आपके अभ्यास में कोई कमी नहीं है । केवल आपको सत्संग नहीं मिला । हजूर दाता दयाल जी महाराज ने अपनी "अद्भुत उपासना योग" नामक किताब में लिखा है कि जब तुम्हारे अन्तर बीन बजने लगे और प्रकाश और शब्द आजाये तब किसी

सतपुरुष की तलाश करो। यह प्रकाश और शब्द लक्षयपद नहीं है मन की शान्ति और सुरत की शान्ति ध्येय है। इसलिए तुम घबराओ मत कि तुम्हारे अन्तर घण्टा, शंख आदि नहीं बजते। तुम्हारा मार्ग बिल्कुल ठीक है। मगर सत्संग की कमी है।

आपने लिखा है कि मैं आपके दोषों को क्षमा करूं और आपका ठीक मार्ग दर्शक बनूं ताकि आप का जन्म खराब न हो। सुनो। आपके लेख अनुसार हुजूर दाता दयाल जी महाराज ने आपको यह कहा भी कि मेरा तुम्हारा अन्तिम मिलाप हैं और तुम अपना काम बना लो। मगर आप चूक गये। पिछले समय में सन्त लोग केवल संकेत करते थे और उनके संकेतों को समझना कोई सरल काम नहीं था। आपका साधन और अभ्यास जो कुछ आपने आज दिन तक किया है यह सब ठीक है। आपको केवल सत्संग की आवश्यकता है। मगर सत्संग से आपको तब लाभ होगा, यदि आप वानो के जाल से निकल जाओ। मेरी तुम्हारे साथ सहानुभूति है। यदि हो सके तो कुछ दिन मेरे पास रहो। तुम ७० साल के बूढ़े और मैं ८९ साल का बूढ़ा हूं। आखिर में आपको लक्ष्य-

पद बता देता हूं जो हजूर दाता दयाल जो महाराज ने मुझे बताया । इस शब्द को ध्यान से सुनो । यह लक्ष्यपद है ।

जिसके मन नहीं चिन्ता व्यापे, जग में वही हे दाम फकीर।
अभय रहे चित गुरु पद राखे, धीर वीर गम्भीर ।
शान्त भाव व्यवहार परमारथ, कभी न हो दिलगीर।
अपनी पीर न उर में साले, लखे पराई पीर।
पर की पीर न जिसे सतावे, सो अधरम वे पीर।
अपना रूप संभाले पल पल, काट मोह जंजीर।
यह फकीर है गुरु को प्यारा, महावीर चित धीर ।
चाह गई चिन्ता सब भागी, आया भव निधि तीर।
हंस रूप धर त्याग नीर को, गह लिया ज्ञान का क्षीर।
राधास्वामी गुरु का सच्चा बालक, पहर विराग का चीर।
तन के रहते मुक्ति विदेही, सहे न द्वन्द शरीर ॥

प्यारे भाई ! मुझे शान्ति कहां मिली ? केवल इस विचार से कि मैं कौन हूं । मालिक एक तत्व है । उसमें हिलोर उठती रहती है । लोक लोकान्तर, सुर्य चान्द, सितारे और धरती आदि बनती रहती है और उसमें समाती रहती है । इसलिए मैं कौन हूं ? चेतन का एक बुलबुला । उसकी मौज से बना और जब उसकी मौज होगी, यह बुलबुला टूट जायेगा और अपने आद में मिल जायेगा । मुझे तो सारे

जीवन की दौड़ धूप के बाद यहां आकर शान्ति मिली । यह भी मालिक की मौज है । हम में एक मैंपना आ जाता है और यही माया है । मैं सच्चे दिल से चाहता हूं रामाशंकर ! मालिक तुमको शान्ति दे । मेरे पास शुभ भावना है । वह देता हूं या जो अनुभव मैंने किया है वह बताता हूं ।

आप का फकीर

प्रवचन हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर ।

दिनांक 16 अक्तूबर 1975

मैं इस बार दुसहरे के अवसर पर दिल्ली गया और आज ही वापिस आया हूं । वहां दो दिन पहले 14 अक्तूबर 1975 को मेरे सत्संग में सरदार दर्शन सिंह जी जो सन्त कृपाल सिंह जी के सुपुत्र हैं । आये मैंने उनको देखा । मेरे दिल ने माना कि यह आदमी निषकप्ट है, ईमानदार है, हेराफेरी नहीं करता और साधक है । यह मेरी Reading हैं । मेरे दिल में विचार आया कि इस समय सन्त कृपाल सिंह जी महाराज के जो शिष्य हैं । वे सख्त परेशानी में हैं । क्यों परेशानी में हैं ? क्योंकि उन विचारों कोगुरु रूप का या गुरु तत्व का ज्ञान नहीं है और साधारण आदमी को यह हो भी नहीं सकता । साधारण सत्संगी विश्वासी होते हैं । मेरा अनुभव यह

कहता है कि सिवाय ज्ञान, अनुभव और सार भेद के जो कुछ किसी को मिलता है, वह सब मानव का आपना ही विश्वास होता है। क्योंकि जीवों को इस असलियत का पता नहीं हैं। इसलिए एक गुरु के चोला छोड़ने के बाद यदि चोला छोड़ने वाला गुरु अपने बाद किसी दूसरे को पूरी authority देकर नहीं गया या किसी के बारे बताकर नहीं गया तो उसके चेलों की बुद्धि डावाँडोल रहती है।

सन्त कृपालसिह जी का और मेरा आपस में दिली प्रेम था। वह रहस्य ज्ञाता थे। मेरे विचारों से वह सहमत थे। वह मुझे कहा करते थे। कि पण्डित जी आप जो कुछ कहते हैं, यह तो शत प्रति शत ठीक है। लेकिन आप कड़वी गोली देते हैं और मैं मिठी गोली देता हूं। सन्त कृपाल सिह जी महाराज के चोला छोड़ने के बाद उनके अनुयायों ने सावन आश्रम में जहां इतनी सम्पत्ति है, धन है और डेरा है। उस सम्पत्ति पर स्वयं अधिकार जमाने के लिए उन्होंने किसी को आचार्य नहीं बनाया। इसलिए सन्त कृपाल सिह जी के अनुयायों को तसकीन शान्ति और सहारा देने के लिए (यद्यपि

यह भी सब अज्ञान का सहारा है) मैंने दर्शन सिंह जी को पगड़ी नारईयल, तिलक और भेंट प्रस्तुत करते हुये उनको सन्त कृपाल सिंह जी महाराज के स्थान पर काम करने की आज्ञा दी ।

अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्यों फकीर ! तेरे पास ऐसा करने का क्या अधिकार है ? मेरे पास यह अधिकार है कि मैं सन्तमत की जड़ी को जानता हूं। यह केवल सर्वधारण को एक विश्वास बन्धाया जाता है । इसका मैं एक उदाहरण देता हूं । दिल्ली में एक आदमी जिसको मैं बिल्कुल जानता भी नहीं था । वह मुझको दिल्ली से बाहर पंदरह मील दूर अपने घर ले गया । मैंने उससे पूछा कि तुम मुझे यहां किस लिए लाये हो । उसने कहा कि बाबा जी ! मैं बहुत झूठ बोलने वाला और गन्दा इन्सान था । चार साल हुये मैंने आपका सत्संग सुना । सत्संग से मेरे मन ने पलटा खाया । अब चार साल से आप हर समय मेरे साथ रहते हैं । यदि मुझे कोई कष्ट होता है तो उसे आप दूर कर देते हैं । अब मैं इमानदारी से अपना काम करता हूं और मेरे काम में आपकी दया से बहुत बरकत है ।

मुझे तो यह भी पता नहीं कि यह आदमी कौन है। यह जितना खेल है ऐ मानव ! तेरे अपने ही विश्वास और श्रद्धा का है। मुझे देखो, मैंने 1942 के बाद किसी को नाम नहीं दिया। हज़ारों आदमी मेरा सत्संग सुनते हैं और मेरी किताबें पढ़ते हैं। लोगों के अन्तर और विदेश में मेरा रूप प्रकट होता है और उनके काम कर जाता है। लेकिन मुझे कोई पता नहीं होता। संसार को यही एक भ्रम है। उस भ्रम के अधीन गुरुमत में हज़ारों गद्दियें बनी हुई हैं। हर एक गद्दि एक दूसरे के विरुद्ध आवाज़ दे रही है। मैंनें यह समझकर कि जो कुछ किसी को मिलता है वह तो उसके श्रद्धा और विश्वास का फल मिलता है मैंने दर्शन सिंह जी को तिलक लगा दिया है ताकि सन्त कृपाल सिंह जी महाराज के सत्संगियों को सहारा मिले और उनकी परेशानी दूर हो। मैंने सन्त और फकीर बनकर देखा है। यद्यपि अभी तक मुझसे स्थाई तौर पर परम सन्तपने या सन्तपने की अवस्था में ठहरा नहीं जाता। हां ! मैं यत्न अवश्य करता रहता हूं वह क्या अवस्था है। वह अवस्था है जहां मानव का

अपना आप शारीरिक मानसिक और आत्मिक बोध भानों में नहीं फंसता या इन बोध भानों को अपना नहीं समझता या वह इन तीनों प्रकार के बोध भानों को स्वप्न समझता है। क्योंकि मैं सन्त-मत की सब श्रेणियों के भेद का पूरा ज्ञाता हूं इस लिए मैं अपने आपको भेद ज्ञाता समझता हूं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे ऐसा ही बनाया ऐसी ही आज्ञा दी। इसके सिवा हो सकता है कि मैं भूल में हूं। लेकिन सन्त दर्शनसिंह जी को देखने से मेरी आत्मा ने यह मान लिया कि उनमें अपना अहभाव नहीं है। मैंने उनसे कह दिया है जिस तरह हजूर बाबा सावन जी ने मुझे कहा था। फकीर ! निर्भय होकर काम करो मैं तुम्हारा संरक्षक रहुंगा। ऐसे ही मैंने दर्शन सिंह जी को कह दिया कि अपनी नीयत साफ रखकर काम करो। मैं तुम्हारा संरक्षक रहुंगा।

मैं सन्त दर्शन सिह जी का संरक्षक कैसे रहुंगा ? सुनो ! क्योंकि वह मुझ पर विश्वास करते हैं और सन्त कृपाल सिह जी केसाथ पहले भी कई बार मुझे मिले हैं। इसलिए जो मेरा अनुभव है या जो कुछ

मैं कहता हूं वह उस पर भी विश्वास और अमल करेंगे। मेरा अनुभव जो उनके मस्तिष्क में बैठेगा वह अनुभव उनको रक्षा करेगा। उदाहरण के रूप में एक आदमी कहीं जा रहा है। आगे मर्ग में कोई खतरा है और उस आदमी का कोई मित्र उसको उस खतरे से सूचित कर देता है तो वहां पहुंचने पर यदि उसके साथ कोई बात होगी तो वह अपने मित्र के कहे के अनुसार अपने आपको सम्भाल लेगा।

मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि सन्त दर्शनसिंह एक सच्चा पवित्र और पाक आत्मा बन कर जीवों को अपने साथ वहाँ ले जाये जहां वह स्वयं पहुंचेगा। मैंने दिल्ली में दुसहरे के सत्संग में कहा था कि जीवों को चलाने का काम और संसार का उभार गुरुमुख कर सकता है। सत्गुरु नहीं कर सकता, सत्गुरु जीवों का उधार कर सकता है।

गुरुमुख कोटन जीव उभारे।

सत्गुरु जीवों का उधार कर सकता है अर्थात इधर से उधर ले जा सकता है। इधर क्या है? शरीर मन और आत्मा। हमारा अपना आद इन

तीनों अवस्थाओं से परे चौथे पद में है। इस चौथे पद की शिक्षा के अधिकारी कौन हैं ?

"नानक कोटन में कोउ, नारायण जिन चीत"

सब को राधास्वामी

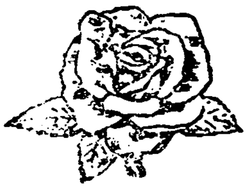

प्रोग्राम दौरा हजूर परम दयाल जी महाराज

प्रस्थान				पहुंच		
स्थान	समय	गाड़ी नं०	तिथि	स्थान	समय	गाड़ी नं०
होशियारपुर	17-30	7JH/34D	25-1-76	दिल्ली	5.00	7JH/34D
दिल्ली	16-20	26 D	26-1-76	रतलाम	6-00	26 D

से लेकर 31-1-76 तक तराना, इन्दौर उज्जैन आदि जहां सत्संगी ले जाना चाहें।

	10-30	85 up Passenger	31-1-76	भूपाल	4-10	85 up Passenger

भूपाल में विश्राम

-2-76	50	22 D Hyedrabad express	4-2-76	काज़ीपेट	2-30	22 D Hyedrabad express

तक आन्ध्रा प्रदेश में जहां सत्संगी ले जाना चाहें।

दिल्ली।

		33 up Kashmir mail	14-3-76	होशियारपुर	6-35	4 JH

के कारण भलाई, इटारसी और राधास्वामी धाम नहीं जायेंगे।

सैक्रेट्री
मानवता मन्दिर